

बादर बरसं गयो

लेखक

'नी र ज'



१९५८

आत्माराम एण्ड संत
प्रकाशक तथा पुस्तक-वित्रेता
बास्मीरी गेट
दिल्ली-६

लेखक की अन्य रचनाएँ	
दर्वे दिया है	४.५०
प्राण-गीत	३.००
भासावरी	प्रेस में
बो गीत	प्रेस में
प्रारम्भिका	प्रेस में

प्रकाशक
 रामलाल पुरी
 संचालक
 भात्माराम एण्ड संस
 कादमीर गेट
 दिल्ली-६

सर्वाधिकार सुरक्षित
 मूल्य ३.००

मुद्रक
 भूवीज प्रेस
 चाण्डी बाजार
 दिल्ली-६

बहन इन्दिरा गांधी को

पर यही अपराध मैं हर बार करता हूँ,
आदमी हूँ, आदमी से प्यार करता हूँ।

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
१ नही मिला	१
२ नींद भी मेरे नयन की	३
३. दिया जलता रहा	५
४. पिया दूर है न पास है	७
५ मुहुरत निकल जाएगा	८
६. बहार घायी	१२
७ कितने दिन चलेगा ?	१४
८ मरण-त्यौहार	१६
९. कफन है आसमान	१८
१०. क्यों मन आज उदास है	२०
११. आ गई थी याद तब	२२
१२ सूनी सूनी साँस की सितार पर	२४
१३ व्यग यह निष्ठुर समय की	२६
१४ बन्द बूलों में	२८
१५ गीत	३०
१६. पार सिखाना व्यर्थ है	३२
१७. खेल यह जीवन-भरण का	३३
१८. रुके न जब तक साँस	३५
१९. मुस्वराकर चल मुसाफिर	३७
२०. मेरा इतिहास नहीं है	३८
२१. मैं तूफानों में	४१
२२ मैं धकपित दीप	४३
२३. यह संभव नहीं है	४५
२४. नयन तुम्हारे	४७
२५. ऐसे भी क्षण आते	४८
२६ इनना तो बतलाते	४९

२७	तेरी भारी हार	.	.	.	५१
२८	स्वीकार	.	.	.	५२
२९	पराजय भी फिर जय है	.	.	.	५५
३०.	बाँदी का यह देश	.	.	.	५७
३१	घर्म है	.	.	.	६०
३२	फूल हो जो	.	.	.	६१
३३	कल का करो न ध्यान	.	.	.	६५
३४	तुम्हें मेरी कसम है	.	.	.	६८
३५.	गीत	.	.	.	७१
३६	आज मेरी गोद में	.	.	.	७३
३७	अभी न जाओ प्राण ?	.	.	.	७६
३८	मगर निठुर न तुम रहे	.	.	.	७९
३९	इस पार कभी, उस पार कभी	.	.	.	८२
४०	नारी	.	.	.	८४
४१	यदि मैं होता घन सावन का	.	.	.	८५
४२	अन्तिम बूँद	.	.	.	८८
४३	अभिमान अभी बाकी है	.	.	.	९१
४४	क्या यही है प्रेम का प्रतिकार ?	.	.	.	९४
४५	भूल जाना	.	.	.	९६
४६	बन्द करो मधु को	.	.	.	९९
४७	निभाना ही कठिन है	.	.	.	१०१
४८	तब याद किसी को	.	.	.	१०३
४९.	प्यार नहीं मिलता है	.	.	.	१०५
५०	मैं तुम्हें भपना	.	.	.	१०७
५१	अब न आऊँगा	.	.	.	१०९
५२	अबतुम रुठो	.	.	.	१११

नहीं मिला...

१

सुख के साथी मिले हजारों ही लेकिन,
दुख में साथ निभाने वाला नहीं मिला ।

जब तक रही वहार उमर की वगिया में,
जो भी आया द्वार, चाँद लेकर आया,
पर जिस दिन भर गयी गुलाबों की पँखुरी,
मेरा आँसू मुझ तक आते शरमाया,
जिसने चाहा मेरे फूलों को चाहा,
नहीं किसी ने लेकिन शूलों को चाहा,
मेला साथ दिखाने वाले मिले बहुत,
सूनापन वहलाने वाला नहीं मिला ।

सुख के साथी

कोई रँग-विरंगे कपड़ों पर रीझा,
मोहा कोई मुखड़े की गोरई से,
सुभा किसी को गयी कठ की कोयलिया,
उलझा कोई काजल की कजराई से,
जिसने देखी वस मेरी डोली देखी,
नहीं किसी ने पर दुलहिन भोली देखी,
तन के तीर तँरने वाले मिले सभी,
मन के घाट नहाने वाला नहीं मिला ।

सुख के साथी

मैं जिस दिन सोकर जागा मैंने देखा,
मेरे चारों ओर ठगों का जमघट है,
एक इधर से एक उधर से लूट रहा,
छिन-छिन रीत रहा मेरा जीवन-घट है,
सबकी आँख लगी थी गठरी पर मेरी,
और मची थी आपस में मेरा-तेरी,
जितने मिले सभी बस धन के चोर मिले,
लेकिन हृदय चुराने वाला नहीं मिला।

सुख के साथी

रूठी सुबह डिठौना मेरा छुड़ा गयी,
गयी ले गयी तरगाई सब दोपहरी,
हँसी खुशी सूरज-चन्दा के बाँट पड़ी,
मेरे हाथ रही केवल रजनी गहरी,
आकर जो लौटा कुछ लेकर ही लौटा,
छोटा और हो गया यह जीवन छोटा,
चीर घटाने वाले ही सब मिले यहाँ,
घटता चीर बढ़ाने वाला नहीं मिला।

सुख के साथी

उस दिन जुगनू एक अन्धेरी बस्ती में,
भटक रहा था इधर-उधर भरमाया सा,
आसपास था अन्तहीन बस अधियारा
केवल था शिर पर निज ली का साया सा,
मैंने पूँछा तेरी नींद कहाँ खोई
यह चुप रहा, मगर उसकी ज्वाला रोई—
“नींद चुराने वाले ही तो मिले यहाँ,
कोई गोद सुलाने वाला नहीं मिला।”

सुख के साथी

नींद भी मेरे नयन की...

२

प्राण ! पहले तो हृदय तुमने चुराया
छीन ली अब नींद भी मेरे नयन की ।

बीत जाती रात हो जाता सबेरा,
पर नयन पछी नहीं लेते बसेरा,
बद पलों में किये आकाश-धरती
सोजते फिरते अंधेरे का उजेरा,
पल धकते, प्राण धकते, रात धकती
सोजने की चाह पर थकती न मन की ।

छीन ली अब नींद भी मेरे नयन की ।

स्वप्न सोते स्वर्ग तक अचल पसारे,
डाल कर गल-बाँह भू, नभ के विनारे,
किस तरह सोऊँ मगर मैं पास आकर
बैठ जाते हैं उतर नभ से मितारे,
श्रीर हैं मुझसे सुनाते वह कहानी
है लगा देती भजी जो अश्रु धन की ।

छीन ली अब नींद भी मेरे नयन की ।

सिर्फं क्षण भर तुम बने मेहमान घर में,
 पर सदा को बस गये बन याद उर में,
 रूप का जादू दिया वह डाल मुझ पर
 आज मैं अनजान अपने ही नगर मे,
 किन्तु फिर भी मन तुम्हे ही प्यार करता
 क्या कहूँ आदत पड़ी है बालपन की।

छीन ली अब नीद भी मेरे नयन की।

पर न अब मुझको रुलाओ और ज्यादा,
 पर न अब मुझको मिटाओ और ज्यादा,
 है बहुत मैं सह चुका उपहास जग का
 अब न मुझ पर मुस्कराओ और ज्यादा,
 धैर्य का भी तो कहीं पर अन्त है प्रिय !
 और सीमा भी कहीं पर है सहन की।

छीन ली अब नीद भी मेरे नयन की।

दिया जलता रहा...

३

“जी उठे शायद शलभ इस आस में रात भर रो रो दिया जलता रहा।”

थक गया जब प्रार्थना का पुण्य, बल,
सो गई जब साधना होकर विफल,
जब धरा ने भी नहीं धीरज दिया,
व्यग जब आकाश ने हँसकर किया,
आग तब पानी बनाने के लिये—
रात भर रो रो दिया जलता रहा।

“जी उठे शायद शलभ इस आस में रात भर रो रो दिया जलता रहा।”

विजलियों का चीर पहने थी दिशा,
आंधियों के पर लगाये थी निशा,
पर्वतों की बांह पकड़े था पवन,
सिन्धु को सर पर उठाये था गगन,
सब हके, पर प्रीति की भर्षी लिये
भ्रातृभ्रों का कारवाँ चलता रहा।

“जी उठे शायद शलभ इस आस में रात भर रो रो दिया जलता रहा।”

कांपता तम, थरथराती लौ रही,
आग अपनी भी न जाती थी सही,
लग रहा था कल्प सा हर एक पल,
वन गई थी सिसकियाँ साँसें विदल,
पर न जाने क्यों उमर की डोर में
प्राण बँध तिल तिल सदा गलता रहा ?

“जी उठे शायद शलभ इस आस में
रात भर रो रो दिया जलता रहा।”

सो मरण की नीद निशि फिर फिर जगी,
शूल के शव पर कली फिर फिर उगी,
फल मधुपो से विछुडकर भी खिला,
पन्थ पन्थी से भटक कर भी चला,
पर विछुड कर एक क्षण को जन्म से
आयु का यौवन सदा ढलता रहा।

“जी उठे शायद शलभ इस आस में
रात भर रो रो दिया जलता रहा।”

धूल का आधार हर उपवन लिये,
मृत्यु से शृंगार हर जीवन किये,
जो अमर है वह न धरती पर रहा,
मर्त्य का ही भार मिट्टी ने सहा,
प्रेम को अमरत्व देने को मगर,
आदमी खुद को सदा छलता रहा।

“जी उठे शायद शलभ इस आस में
रात भर रो रो दिया जलता रहा।”

पिया दूर है न पास है ..



जिन्दगी न तृप्ति है, न प्यास है
क्योकि पिया दूर है न पास है ।

बढ रहा शरीर, आयु घट रही,
चित्र बन रहा, लकीर मिट रही,
आ रहा समीप लक्ष्य के पथिक,
राह किन्तु दूर दूर हट रही,
इसलिये सुहागरात के लिये—
आँख मे न अश्रु है, न हास है ।

जिन्दगी न तृप्ति है, न प्यास है
क्योकि पिया दूर है न पास है ।

गा रहा सितार, तार रो रहा,
जागती है नींद, विश्व सो रहा,
सूर्य पी रहा समुद्र को उमर,
और चाँद बूँद बूँद हो रहा,
इसलिये सदैव हँस रहा मरण,
इसलिये सदा जनम उदास है ।

जिन्दगी न तृप्ति है, न प्यास है
क्योकि पिया दूर है न पास है ।

बादर बरस गयो

बूंद गोद में लिये अंगार है,
ओठ पर अंगार के बहार है,
धूल में सिंदूर फल का छिपा,
और फूल धूल का मिंगार है,
इसलिए विनाश है सृजन यहाँ,
इसलिये सृजन यहाँ विनाश है।

जिन्दगी न तृप्ति है, न प्यास है
क्योंकि पिया दूर है न पास है।

व्यथं रात है अगर न स्वप्न है,
प्रात धूर, जो न स्वप्न भग्न है,
मृत्यु तो सदा नवीन जिन्दगी,
अन्यथा शरीर लाश नग्न है,
इसीलिये अकास पर जमीन है,
इसलिये जमीन पर अकास है।

जिन्दगी न तृप्ति है, न प्यास है
क्योंकि पिया दूर है न पास है।

दीप अंधकार से निकल रहा,
क्योंकि तम विना सनेह जल रहा,
जी रही सदेह मृत्यु जी रही,
क्योंकि आदमी अदेह ढल रहा,
इसलिये सदा अजेय धूल है,
इसलिये सदा विजेय श्वास है।

जिन्दगी न तृप्ति है, न प्यास है
क्योंकि पिया दूर है न पास है।

मुहरत निकल जायेगा...

५

देखती ही न दर्पण रहो प्राण ! तुम
प्यार का यह मुहरत निकल जायेगा ।

साँस की तो बहुत तेज रफ्तार है,
और छोटी बहुत है मिलन की घड़ी,
भ्राँजते भ्राँजते ही नयन-बावरे,
बुझ न जाये कही उम्र की फुलभडी,
सब मुसाफिर यहाँ, सब सफर पर यहाँ,
ठहरने की इजाजत किसी को नहीं,
केस ही तुम न बँठी गुंयाती रहो,
देसते देसते चाँद ढल जायेगा ।

देसती ही न दर्पण रहो प्राण
प्यार का यह मुहरत निकल जायेगा ।

बादर बरस गया

भूमती गुनगुनाती हुई यह हवा,
कौन जाने कि तूफान के साथ हो,
क्या पता इस निदासे गगन के तले
यह हमारे लिये आखिरी रात हो,

जिन्दगी क्या—समय के बियावान मे
एक भटकी हुई फूल की गंध है,
चूडियाँ ही न तुम खनखनाती रहो,
कल दिये को सबेरा निगल जायेगा ।

देखती ही न दर्पण रहो प्राण ! तुम
प्यार का यह मुहूरत निकल जायेगा ।

यह महकती निशा, यह बहकती दिशा,
कुछ नहीं, है शरारत किसी शाम की,
चाँदनी की चमक, दीप की यह दमक,
है हँसी बस किसी एक बेनाम की,
है लगी होड दिन-रात मे प्रिय ! यहाँ,
धूप के साथ लिपटी हुई छाँह है,
वस्त्र ही तुम बदल कर न आती रहो,
यह शरमसार मौसम बदल जायेगा ।

देखती ही न दर्पण रहो प्राण ! तुम
प्यार का यह मुहूरत निकल जायेगा

होठ पर जो सिसकते पड़े गीत यह,
एक आवाज के सिर्फ महमान है,
ऊँपती पुतलियों में जड़े जो सपन,
वे किन्ही आसुओं से मिले दान हैं,

कुछ न मेरा न कुछ है तुम्हारा यहाँ,
 कर्ज के व्याज पर सिर्फ हम जी रहे,
 माँग ही तुम न बैठी सजाती रहो,
 आ गया जो महाजन न टल पायेगा ।

देखतो ही न दर्पण रहो प्राण ! तुम
 प्यार का यह मुहूरत निकल जायेगा ।

कौन शृ गार पूरा यहाँ कर सका ?
 सेज जो भी सजी सो अघूरी सजी,
 हार जो भी गुंथा सो अघूरा गुंथा,
 वीन जो भी वजी सो अघूरी वजी,

हम अघूरे, अघूरा हमारा सृजन,
 पूर्ण तो एक बस प्रेम ही है यहाँ,
 काँच से ही न नजरें भिलाती रहो,
 बिम्ब को मूक प्रतिबिम्ब ध्रल जायेगा ।

देखतो ही न दर्पण रहो प्राण ! तुम
 प्यार का यह मुहूरत निकल जायेगा ।

बहार आयी...



तुम आये कण-कण पर बहार आयी
तुम गये,गयी भर मन की कली-कली ।

तुम बोले पतभर मे कोयल बोली,
वन गयी पिघल गुँजार अमर-टोली,
तुम चले चल उठी वायु रूप-वन की
भुक भूम-भूम कर डाल-डाल डोली,
मायावी धूँघट उठते ही क्षण में
रुक गया समय,पिघली दुख की बदली ।
तुम गये,गयी भर मन की कली-कली ॥

रेशमी रजत मुस्कानो में रँगकर,
तारे बनकर छा गये अश्रु तम पर,
फँस उरभ उनीदे कुन्तल-जालों मे,
उतरा धरती पर ही राकेन्दु मुखर,
वन गयी अमावस पूर्णों सोने की,
चाँदी से चमक उठे पथ गली-गली ।
तुम गये,गयी भर मन की कली-कली ॥

तुमने निज नीलांचल जब फैलाया,
 दोपहरी मेरी बनी तरल छाया,
 लाजारुण ऊषा भाँकी भुरमुट से,
 निज नयन ओट तुमने जब भुस्काया,
 घुँघरू-सी गमक उठी सूनी सध्या,
 चचल पायल जब आंगन मे मचली ।
 तुम गये,गयी भर मन की कली-कली॥

हो चले गये जब से तुम मनभावन ।
 मेरे आंगन मे लहराता सावन,
 हर समय बरसती बदली-सी आँखे,
 जुगनू-सी इच्छायें बुझती उन्मन,
 बिखरे हैं बूंदो से सपने सारे,
 गिरती आशा के नौडो पर विजली ।
 तुम गये,गयी भर मन की कली-कली ॥

कितने दिन चलेगा ?...

७

रूप की इस काँपती लौ के तले
यह हमारा प्यार कितने दिन चलेगा ?

नील-सर मे नीद की नीली लहर,
खोजती है भोर का तट रात भर,
किंतु आता प्रात जब गाती ऊषा,
बूंद बन कर हर लहर जाती विखर,
प्राप्ति ही जब मृत्यु है अस्तित्व की,
यह हृदय व्यापार कितने दिन चलेगा ?

रूप की इस काँपती लौ के तले
यह हमारा प्यार कितने दिन चलेगा ?

'ताज' यमुना से सदा कहता अभय—
"काल पर मैं प्रेम-यौवन की विजय"
बोलती यमुना—"अरे तू क्षुद्र क्या—
एक मेरी बूंद मे डूबा प्रणय",
जी रही जब एक जल-कण पर तृषा,
वृप्ति का आधार कितने दिन चलेगा ?

रूप की इस काँपती लौ के
यह हमारा प्यार कितने दिन चलेगा ?

बादर बरस गयो

स्वर्ग को भू की चुनौती सा अमर,
है खडा जो वह हिमालय का शिखर,
एक दिन हो भूविलुंठित गल-पिघल,
जल उठेगा बन मरुस्थल अग्नि-सर,
धिर न जब सत्ता पहाडो की यहाँ,
अश्रु का श्रृ गार कितने दिन चलेगा ?

रूप की इस कांपती ली के तले
यह हमारा प्यार कितने दिन चलेगा ?

गूँजते थे फूल के स्वर कल जहाँ,
तैरते थे रूप के वादल जहाँ,
अव गरजती रात सुरसा-मी खडी,
घन-प्रभंजन की अनल-हलचल वहाँ,
काल की जिस बाड मे डूबी प्रवृति,
श्वास का पतवार कितने दिन चलेगा ?

रूप की इस कांपती ली के तले
यह हमारा प्यार कितने दिन चलेगा ?

विश्व भर मे जो सुबह लाती किरण,
साँझ देती है वही तम को शरण,
ज्योति सत्य, असत्य तम फिर भी सदा,
है किया करता दिवस निशि को वरण,
सत्य भी जब धिर नही निज रूप में,
स्वप्न का ससार कितने दिन चलेगा ?

रूप_की इस कांपती ली के तले
यह हमारा प्यार कितने दिन चलेगा ?

मरण-त्यौहार***



पथिक । ठहरने का न ठौर जग, खुले पडे सब द्वार,
ग्रौर डोलियो का घर घर पर लगा हुआ बाजार,
जन्म है यहाँ मरण-त्यौहार ।

देख । घरा की नग्न लाश पर नीलाकाश खडा है,
सागर की शीतल छाती मे ज्वालामुखी जडा है,
सूर्य उठाये हुये चाँद की अर्थी निज कघो पर,
ग्रौर कली के सम्मुख उपवन का ककाल पडा है,
खा खाकर निज आयु जो रही जीवन की बंदेही,
रे । विष पीकर नहीं, अमृत पीकर मरता ससार ।
जन्म है यहाँ मरण-त्यौहार ।

आजे हुये नीद का काजल सब अँखियाँ कजरारी,
आलिगन कर रही मृत्यु का बाँहें प्यारी प्यारी,
कोई कही रहे पर सबकी मजिल एक यहाँ पर,
रे । मर्घट की ओर मुडी हैं राहे जग की सारी,
एक दिवस आती है सबके जीवन में मजबूरी,
आौर एक दिन मिट्टी सबका करती है शृगार ।
जन्म है यहाँ मरण-त्यौहार ।

काल-तिमिर के नागफास में बन्दी किरन-परी है,
 और फूल के नन्हे से दिल पर चट्टान धरी है,
 धिरी आग की लाल बदरिया तरु तरु पर उपवन के,
 पात पात पर अगारो की घूँप - छाँह छितरी है,
 नोड नोड पर वज्र-विजलियों की आँधी मँडराती,
 वृण वृण में करवटें ले रहा मस्थल का पतभार ।

जन्म है यहाँ मरण-त्योहार ।

लिये मोद में नाश, मर रही जीकर यहाँ अमरता,
 घृणित चिता की राख छिपाये जग भर की सुन्दरता,
 दवा लकड़ियों के नीचे पुरुषार्थ पार्थ का सारा,
 अरे ! कृष्ण पर क्षुद्र बधिक का तीर व्यग सा करता,
 हाय ! राम का शव सरयू में नगा तैर रहा है,
 सीता का सिन्दूर अवध में करता हाहाकार ।

जन्म है यहाँ मरण-त्योहार ।

लगा हुआ हर एक यहाँ जाने की तैयारी में,
 भरी हुई हर गैल, चल रहे पर सब लाचारी में,
 एक एक कर होती जानी खाली सभी सरायें,
 एक एक कर विछुड़ रहे सब भीत उमर धारी में,
 और कह रही रो रो कर सब सूनी मेज अटरियाँ—
 “सदियों का सामान किया क्यों ? रहना था दिन चार” ।

जन्म है यहाँ मरण-त्योहार ।

कफन है आसमान***

है

मत करो प्रिय ! रूप का अभिमान,
कब्र है घरती, कफन है आसमान ।

हर पखेरू का यहाँ है नोड मघंट पर,
है बँधी हर एक नैया मृत्यु के तट पर,
खुद बखुद चलती हुई यह देह अर्थो है,
प्राण है प्यासा पथिक ससार पनघट पर,
किसलिये फिर प्यास का अपमान ?
जी रहा है प्यास पी पी कर जहान ।

मत करो प्रिय ! रूप का अभिमान,
कब्र है घरती, कफन है आसमान ।

भूमि से, नम से, नरक से, स्वर्ग से भी दूर,
हो कहीं इन्सान पर है मौत से मजदूर,
घूर सब कुछ इस मरण की राजधानी में,
सिर्फ अक्षय है किसी की प्रीति का सिन्दूर,
किसलिये फिर प्यार का अपमान ?
प्यार है तो जिन्दगी हरदम जवान ।

मत करो प्रिय ! रूप का अभिमान,
कब्र है घरती, कफन है आसमान ।

बादर बरस गयो

रंक-राजा, मूर्ख-पंडित, रूपवान-कुरूप,
सार्ध के आधीन सब की जिन्दगी की धूप,
आखिरी सब की यहाँ पर है चित्ता ही सेज,
धूल ही शृंगार अन्तिम, अन्त-रूप अनूप,
किसलिये फिर धूल का अपमान ?
धूल हम तुम, धूल है सब की समान ।

मत करो प्रिय ! रूप का अभिमान,
कब्र है धरती, कफन है आसमान ।

एक भी देखा न ऐसा फूल इस जग में,
जो नहीं पय पर चुभा हो धूल वन पग में,
सब यही छूटा पिया घर जब चली डोली,
एक आँसू ही रहा वम साथ टग-मग में,
किसलिये फिर अश्रु का अपमान ?
अश्रु जीवन में अमृत से भी महान ।

मत करो प्रिय ! रूप का अभिमान,
कब्र है धरती, कफन है आसमान ।

प्राण ! जीवन क्या क्षणिक बस साँस का व्यापार,
देह को दूकान जिस पर काल का अधिकार,
रात को होगा सभी जब लेन-देन समाप्त,
तब स्वयं उठ जायगा यह रूप का बाजार,
किसलिये फिर रूप का अभिमान ?
फूल के शव पर मड़ा है बागवान ।

मत करो प्रिय ! रूप का अभिमान,
कब्र है धरती, कफन है आसमान ।

क्यों मन आज उदास है...

१०

आज न कोई दूर न कोई पास है,
फिर भी जाने क्यों मन आज उदास है ?

आज न सूनापन भी मुझसे बोलता,
पात न पीपल पर भी कोई डोलता,
ठिठकी-सी है वायु, थका-सा नीर है,
सहमी - सहमी रात, चाँद गम्भीर है,
गुपचुप धरती, गुमसुम सब आकाश है ।
फिर भी जाने क्यों मन आज उदास है ?

आज शाम को भरी नहीं कोई कली,
आज अँधेरी नहीं रही कोई गली,
आज न कोई पन्थी भटका रहा में,
जल पपीहा आज न प्रिय की चाह में,
आज नहीं पतझर, नहीं मधुमास है ।
फिर भी जाने क्यों मन आज उदास है ?

आज अधूरा गीत न कोई रह गया,
 चुभने वाली बात न कोई कह गया,
 मिलकर कोई मीत आज टूटा नहीं,
 जुड़कर कोई स्वप्न आज टूटा नहीं,
 आज न कोई दर्द न कोई प्यास है।
 फिर भी जाने क्यों मन आज उदास है ?

आज घुमड़कर बादल छाया है कहीं,
 बिना बुलाये सावन आया है कहीं,
 किसी अधजले विकल शलभ की याद में,
 आज किसी ने दीप जलाया है कहीं,
 इसीलिए शायद मन आज उदास है।
 जब कि न कोई दूर न कोई पास है ॥

आ गई थी याद तब . . .

११

आ गई थी याद तब किस शाप की ?

कोयली को दे मधुर सगीत-स्वर,
सृष्टि की सीमन्त में सिन्दूर भर,
धूल को कुकुम बना, विखरा सुरा,
चूम कलियों के अघर, गुँजार कर,

जब धरा पर देह धर ऋतुपति चला—मुस्कराये अश्रुओं' रोई हँसी !
आ गई थी याद तब किस शाप की ?

ले नयन में कामना का वृत्ति-जल,
झाल मुख पर प्रीति का धूँघट नवल,
साज सपनों की मुहागिल चूनरी,
रँग महावर से मुखर पायल चपल,

जब पिया घर रूप की दुलहिन चली—मुस्कराई माँग, रोई कचुकी !
आ गई थी याद तब किस शाप की ?

बादर बरस गयो

अश्रु से आराध्य के धी धी चरण,
फूल से निशि दिन चढा उजले सपन,
सूँथ गीतो का सजल गलहार-वर,
वर्तिका सौ बार सब नाथें तरुण,
भक्त जय वरदान के क्षण सो गया—मुस्कराई मूर्ति, रोई आरती !
आ गई थी याद तब किस शाप की ?

साध को कर चूर, सुधियो को मुला,
मोतियो की हाट, मह्यल में गला,
ओड अनचाही निठुरता का कफन,
स्नेह का काजल नयन जल में घुला,
अश्रु-पथ जब प्रीति की अर्यो उठी—मुस्कराई नर्तकी, रोई सती !
आ गई थी याद तब किस शाप की ?

बाहु में वरदान भर निर्माण के,
लोचनो में खड शत दिनमान के,
ओठ में मरु, वक्ष में ज्वालामुखी,
कठ में भोंके लिये तूफान के,
इबास-यात्रा पर बढी उठ देह जब—मुस्कराई मृत्यु, रोई जिन्दगी !
आ गई थी याद तब किस शाप की ?

सूनी सूनी सांस की सितार पर...

१२

सूनी सूनी सांस की सितार पर,
गीले गीले आंसुओं के तार पर,
एक गीत सुन रही है जिन्दगी,
एक गीत गा रही है जिन्दगी।

चढ रहा है सूर्य उधर, चाँद इधर ढल रहा,
भर रही है रात यहाँ, प्रात वहाँ खिल रहा,
जी रही है एक सांस, एक सांस मर रही,
बुझ रहा है एक दीप, एक दीप जल रहा,
इसलिये मिलन - विरह - विहान में—
इक दिया जला रही है जिन्दगी,
इक दिया बुझा रही है जिन्दगी।

रोज फूल कर रहा है धूल के लिये सिंगार,
और डालती है रोज धूल फूल पर अंगार,
कूल के लिये लहर लहर विकल मचल रही,
किन्तु कर रहा है कूल बूँद बूँद पर प्रहार,
इसलिये घृणा - विदग्ध - प्रीति को—
एक क्षण हँसा रही है जिन्दगी,
एक क्षण रुला रही है जिन्दगी।

बादर भरत गयो

एक दीप के लिये पतंग कोटि मिट रहे,
एक मीत के लिये असख्य मीत छुट रहे,
एक बूँद के लिये गले टले हजार मेघ,
एक अश्रु से सजीव सी सपन लिपट रहे,
इसलिये सृजन - विनाश - सन्धि पर—

एक घर बसा रही है जिन्दगी,
एक घर मिटा रही है जिन्दगी ।

सो रहा है आसमान, रात रो रही खडी,
जल रही बहार, कली नीद में जडी पडी,
घर रही है उम्र की उमग कामना शरीर,
दूट पर बिखर रही है साँस की लडी लडी,
इसलिये चिता की धूप छाँह में—

एक पल सुला रही है जिन्दगी,
एक पल जगा रही है जिन्दगी ।

जा रही बहार, आ रही खिजाँ लिये हुए,
जल रही सुबह बुझी हुई शमा लिये,
रो रहा है अशक, आ रही है आँख को हँसी,
राह चल रही है गर्दे-कारवाँ लिये हुए,
इस लिये मज्जार की पुकार पर—

एक बार आ रही है जिन्दगी,
एक बार जा रही है जिन्दगी ।

व्यंग यह निष्ठुर समय का...

१३

व्यंग यह निष्ठुर समय का ।

आंसुओं के स्नेह से जिसको जलाकर,
प्राण-अँचल-छाँह में जिसको छिपाकर,
चीखती निशि की गहन वोहड़ डगर को—
पार कर पाता पथिक जिसकी दया पर,
पर बुझा देता वही दीपक बटोही,
जब समय आता निकट दिन के उदय का ।

व्यंग यह निष्ठुर समय का ।

राह में जिसकी बिछा कुसुमित पलवन्दल,
भाल-तल पर आँक जिसके चरण चञ्चल,
सुरभि की सुरभित सुरासरि से जिसे छू,
हर लिया था ताप जिसकी देह का कल,
आज फूलों की उसी मृदु चाँदनी को,
नोचता बन काल वह झोका मलय का ।

व्यंग यह निष्ठुर समय का ।

देखकर जिसका अवाधित वेग हर हर,
 राह दे देते सहम कर शैल-भूधर,
 वृण सहस्र बहते सघन वन साध जिसके,
 घाटियाँ जिसमे पिघल जाती मचलकर,
 बूँद सा लेकिन वही गतिवान निर्भर—
 खोजता आश्रय उदधि मे अन्त लय का ।

व्यंग यह निष्ठुर समय का ।

कह रहे किस भाँति फिर तुम सत्य जीवन,
 लक्ष्य उसका एक जब बस नाश का क्षण,
 सत्य तो वह है समय ही दास जिसका,
 नाश जिसके सामने कर दे समर्पण,
 काल पर अंकित न जीवन-चिन्ह कोई,
 किन्तु जीवन पर अमिट है लेख वय का ।

व्यंग यह निष्ठुर समय का ।

कुछ नही जीवन, अरे बस देह का ऋण,
 जो चुकाना ही हमें पडता किसी क्षण,
 कर रहा व्यापार पर इस ब्याज से जो,
 वह समय ही, काल ही शाद्वत-चिरन्तन,
 फूल का है मूल्य उपवन मे न कोई,
 सत्य मधुऋतु ही सदा सिरजन-प्रलय का ।

व्यंग यह निष्ठुर समय का ।

बन्द कूलों में...

१४

बन्द कूलो में समुन्दर का शरीर,
किन्तु सागर कूल का बन्धन नहीं है।

धूल ने सीमित असीमित को किया है,
धूल ने अमरत्व मरघट को दिया है,
और सबको तो मिला जग में हलाहल,
बस अकेली धूल ने अमरित पिया है,
धूल सौ सौ बार मिटकर भी न मिटती,
क्योंकि उसके प्राण में घडकन नहीं है।

बन्द कूलो में समुन्दर का शरीर,
किन्तु सागर कूल का बन्धन नहीं है।

एक रवि है सौ प्रभातो का उजेरा,
एक शशि है सौ निशाओ का सवेरा,
एक पल निज में छिपाये कल्प लाखो,
एक वृण है कोटि विहगो का बसेरा,
और रजकण एक बाँधे मेरु उर में,
मेरु का बन्दी मगर रजकण नहीं है।

बन्द कूलो में समुन्दर का
किन्तु सागर कूल का बन्धन न

धूल की ऐसी सुहागिल है चुनरिया,
 ओढ़ जिसको हो गई विधवा उमरिया,
 और जिसको भूल से छू एक क्षण में,
 बन गई अगार आँसू की बदरिया,
 धूल मजिल, धूल पन्थी, धूल पथ है,
 क्योंकि उसका नाश और सृजन नहीं है।

• वन्द कूलो में समुन्दर का शरीर,
 किन्तु सागर कूल का बन्धन नहीं है।

अब तुम्हारा प्यार भी मुझको नहीं स्वीकार प्रेयसि !

चाहता था जब हृदय बनना तुम्हारा ही पुजारी,
छीनकर सर्वस्व मेरा तब कहा तुमने भिखारी,
आँसुओं से रात दिन मैंने चरण धोये तुम्हारे,
पर न भीगी एक क्षण भी चिर निष्ठुर चितवन तुम्हारी,
जब तरस कर आज पूजा-भावना ही भर चुकी है,
तुम चलो मुझको दिखाने भावमय संसार प्रेयसि !
अब तुम्हारा प्यार भी मुझको नहीं स्वीकार प्रेयसि !

भावना ही जब नहीं तो व्यर्थ पूजन और अर्चन,
अर्थ है फिर देवता भी, व्यर्थ फिर मन का समर्पण,
अतः तो यह है कि जग में पूज्य केवल भावना ही,
देवता तो भावना की सृष्टि का बस एक साधन,
सृष्टि का वरदान दोनों के परे जो—वह समय है,
वही समय ही वह न तो फिर व्यर्थ सब आधार प्रेयसि !
अब तुम्हारा प्यार भी मुझको नहीं स्वीकार प्रेयसि !

अव मचलते हैं न नयनो में कभी रगीन सपने,
 हैं गये भर से किये थे जो हृदय मे घाव तुमने,
 कल्पना मे अव परी बनकर उतर पाती नही तुम,
 पास जो थे हैं स्वय तुमने मिटाये चिन्ह अपने,
 दग्ध मन में जब तुम्हारी याद ही बाकी न कोई,
 फिर वहाँ से मैं कहूँ आरम्भ यह व्यापार प्रेयसि ।
 अव तुम्हारा प्यार भी मुझको नही स्वीकार प्रेयसि ।

अश्रु-सी है आज तिरती याद उस दिन की नजर मे
 थी पडी जब नाव अपनी काल तूफानी भवर में,
 ब्रूल पर तब हो खडी तुम व्यग मुझ पर कर रही थी,
 पा सवा था पार मैं खुद डूबकर सागर-नहर मे
 हर लहर ही आज जब लगने लगी है पार मुझको
 तुम चली देने मुझे तब एव जड पतवार प्रेयसि ।
 अव तुम्हारा प्यार भी मुझको नही स्वीकार प्रेयसि ।

प्यार सिखाना व्यर्थ है...

१६

अब मुझको प्रिय ! प्यार सिखाना व्यर्थ है ।

जब बहार के दिन अपने थे बोली तब न कुयलिया,
जब वृन्दावन तडप रहा था आया तब न सँवलिया,
विलख विलख मर गयी मगर जब विकल विरह की राधा,
नयन-यमुन-तट प्राण ! मिलन का रास रचाना व्यर्थ है ।

अब मुझको प्रिय ! प्यार सिखाना व्यर्थ है ।

एक बूँद के लिये पपीहे ने सौ सिन्धु बहाये,
किन्तु वादलो ने जी भर कर बस पाहन बरसाये,
तरस तरस बन गयी मगर जब तृप्ति टपा ही तो फिर,
पधराये अधरो पर अमृत भी बरसाना व्यर्थ है ।

अब मुझको प्रिय ! प्यार सिखाना व्यर्थ है ।

अब सब सपने धूर भर चुकी हैं सारी आशायें,
टूटे सब विश्वास और बदली सब परिभाषायें,
जीता हूँ इसलिये कि जीना भी है एक विवशता,
है मृत्यु के लिये भी जीवन की कुछ आवश्यकता,
इसीलिये प्रिय प्राण ! किसी की सुधि का दीप सलोना,
मेरे अंधियारे खडहर में आज जलाना व्यर्थ है ।

अब मुझको प्रिय ! प्यार सिखाना व्यर्थ है ।

खेल यह जीवन-मरण का . . .

१७

आज तो अब बन्द कर दो खेल यह जीवन-मरण का ।

यक चुका तन, यक चुका मन, यक चुकी अभिलाष मन की,
साँस भी चलती थकी सी, भ्रमती पुतली नयन की,
श्वेद, रज से लस्त जीवन बन गया है भार पग पर,
वह गरजती रात आती पाँछती लाली गगन की,
भर रहा सीमन्त-सुकता-फल दिन-नामिनि-किरण का ।
आज तो अब बन्द कर दो खेल यह जीवन-मरण का ॥

स्वप्न-नीडो की दिशा मे ले मधुर धरमाल मन में,
जा रहे उड़ते विहग सवेत सा बरते गगन में,
तैरती दिन भर रही जो नाव तट पर आ लगी है,
धीर भी जग के खिलाड़ी जा रहे मधु की शरण में,
वह धकेलो का सहारा चाँद भी खोया गगन का ।
आज तो अब बन्द कर दो खेल यह जीवन-मरण का ॥

प्रात से ही खेलता हूँ खेल में अब तक तुम्हारा,
 और क्षण भर भी नहीं विश्राम को मैंने पुकारा,
 किन्तु आखिर मैं मनुज हूँ और मुझमें मन मनुज का,
 चाद श्रम के चाहता जो सेज-शय्या का सहारा,
 खेलता कैसे रहूँ फिर खेल में निशि भर नयन का ।
 आज तो अब बन्द कर दो खेल यह जीवन-मरण का ॥

खेल यह होगा खतम कल या नहीं—यह भी अनिश्चित,
 कौन जीतेगा सदा से सर्वथा यह बात अविदित,
 फिर कहो किस आस पर मैं लड़खड़ाता सा निरन्तर,
 खेलता ही नित रहूँ इस खेल से होकर अपरिचित,
 जब कि सम्मुख हो रहा है खून मेरे सुख-सपन का ।
 आज तो अब बन्द कर दो खेल यह जीवन-मरण का ॥

“ओ सरल नादान मानव ! जान क्या पाया न अब तक,
 हो नहीं सकता खतम यह खेल बाकी साँस जब तक,
 वह नया कच्चा खिलाडी खेल के जो बीच ही में,
 पूँछता है साथियों में बन्द होगा खेल कब तक,
 इसलिए फिर से जुदा जो खो गया उत्साह मन का ।
 और हँसकर खेलता जा खेल यह जीवन-मरण का ॥”

रुके न जब तक साँस...

३८

रुके न जब तक साँस, न पथ पर रुकना थके बटोही ।

साँसा मे पहले ही जो पन्थी पथ रब जाता,
जग की नजरो में कायर वह जीवर भी मर जाता,
चलते चलते ही जो मिट जाता है किन्तु डगर पर,
उसके पथ की छाव विश्व मस्तक पर सदा चढाना,
पथ पर साँसो की गति से है मूल्य अधिप पग-गति वा,
पग के छाला से पथ पर यह लिप्यना थके बटोही ।
रुके न जब तक साँस, न पथ पर रुकना थके बटोही ॥

अगरिणत बठिन पहाड नदी की राह रोकने आते,
पर उसकी गति के सम्मुख सब चूर चूर हो जाते,
चलना ही, बटना ही जिसके जीवन का व्रत प्रस है,
जग भर के तूफान प्रलय-धन उसकी रोक न पाते,
साँसो की गति से, पग-गति से अधिक प्रबल गति मन की,
पग-गति में मन की गति भर कर चलना थके बटोही ।
रुके न जब तक साँस, न पथ पर रुकना थके बटोही ॥

जीवन क्या—माटो के तन मे केवल गति भर देना,
 और मृत्यु क्या—उस गति को ही क्षण भर यति कर देना,
 गति-यति के जो बीच किन्तु है एक वस्तु अनजानी,
 वही मनुज की हार-जीत के क्रम की अमिट निशानी,
 यही निशानी पथ पर जिससे जीत बनी मुस्काये,
 मुस्काकर स्वागत शूलों का करना थके बटोही !
 हके न जब तक साँस, न पथ पर हकना भके बटोही ॥

पथ पर चलना तुम्हें तो मुस्कराकर चल मुसाफिर ।

वह मुसाफिर क्या जिसे कुछ शूल ही पथ के घका दें ?
हौमला वह क्या जिसे कुछ मुद्रिकले पीछे हटा दें ?
वह प्रगति भी क्या जिसे कुछ रगिनी कलियाँ नितलियाँ,
मुस्कराकर गुनगुनाकर ध्येय-पथ, मञ्जिल भुला दें ?
जिन्दगी की राह पर केवल वही पथी सफल है,
आंधियो में, दिजलियो में जो रहे अविचल मुसाफिर ।
पथ पर चलना तुम्हें तो मुस्कराकर चल मुसाफिर ॥

जानना जब तू कि कुछ भी हो तुम्हें बटना पड़ेगा,
आंधियो से ही न खुद से भी तुम्हें लडना पड़ेगा,
सामने जब तक पडा कर्तव्य-पथ तन तन मनुन आँ ।
मौत भी आये अगर तो मौत से निडना पड़ेगा,
है अधिक अच्युत यही फिर पथ पर चल मुन्वगता,
मुस्करानी जाय जिससे जिन्दगी अक्षरन मुसाफिर ।
पथ पर चलना तुम्हें तो मुस्कराकर चल मुसाफिर ॥

याद रख जो आँधियों के सामने भी मुस्कराते,
 वे समय के पथ पर पदचिह्न अपने छोड़ जाते,
 चिह्न वे—जिनको न धी सवते प्रलय-तूफान घन भी,
 मूक रह कर जो सदा भूले हुआ वो पथ बताते,
 किन्तु जो कुछ मुशिलें ही देख पीछे लौट पटते,
 जिन्दगी उनकी उन्हे भी भार ही केवन मुसाफिर ।
 पथ पर चलना तुम्हे तो मुस्कराकर चल मुसाफिर ॥

कटकित यह पथ भी हो जायगा आसान क्षण मे,
 पाँव की पीडा क्षणिक यदि तू करे अनुभव न मन मे,
 सृष्टि सुख-दुख न्या हृदय की भावना के रूप है दो,
 भावना की ही प्रतिध्वनि गुंजती भू, दिशि, गगन मे,
 एक ऊपर भावना से भी मगर है शक्ति कोई,
 भावना भी सामने जिसके विदश व्याकुल मुसाफिर ।
 पथ पर चलना तुम्हे तो मुस्कराकर चल मुसाफिर ॥

देख सर पर ही गरजते है प्रलय के काल-बादल,
 व्याल बन फुफकारता है सृष्टि का हरिताम अचल,
 कटको ने छेदकर है फर दिया जर्जर सकल तन,
 किन्तु फिर भी डाल पर मुस्का रहा वह फूल प्रतिपल,
 एक तू है देखकर कुछ शूल ही पथ पर अभी से,
 है लुटा बैठा हृदय का धर्म, साहस, बल मुसाफिर ।
 पथ पर चलना तुम्हे तो मुस्कराकर चल मुसाफिर ॥

मेरा इतिहास नहीं है

२०

काल बादला से घुन जाय वह मेरा इतिहास नहीं है !

गायक जग म कौन गीत जो मुझ सा गाय
मैंने तो बेचल है ऐसे गीत बनाय,
कठ नहीं, गाती है जिनका पलक गीतों,
स्वर-सम जिनका अश्रु-मोतिया, हास नहीं ह ।

काल बादला से

मुझसे ज्यादा मस्त जगत में मस्ती किसकी
और अधिक आजाद अछूती हस्ती किनकी,
मेरी तुल्युन चहका करती उन बगिया म,
जहाँ सदा पतझर, आता मधुमास नहीं है !

काल बादला से

विसम इतनी शक्ति साथ जो कदम धर सके,
गति न पवन की नी जो मुझमे होड कर सके,
मैं ऐसे पय का पयी हूँ जिसको क्षण भर,
मञ्जित पर भी खाने का अवकाश नहीं है !

काल बादला से

बादर बरस गयो

४०
कौन विश्व में है जिसका मुझसे सिर ऊँचा ?
अभ्रकप यह तुंग हिमालय भी तो नीचा,
क्योंकि खुले हैं मेरे लोचन उस दुनियाँ में,
जहाँ धरा तो है लेकिन आकाश नहीं है ।
बाल बादलो से

मैं तूफानों में...

२१

मैं तूफानों में चलने का आदी हूँ
तुम मत मेरी मजिल आसान करो !

हैं फूल रोकते, कांटे मुझे चलाते,
मरघल, पहाड चलने की चाह बढाते,
सच कहता हूँ मुझिले न जब होती हैं,
मेरे पग तब चलने में भी शरमाते,
मेरे संग चलने लगे हवायें जिससे,
तुम पथ के कण कण को तूफान करो ।

मैं तूफानों में चलने का आदी हूँ
तुम मत मेरी मजिल आसान करो !

अगर अघर पर घर मैं मुस्काया हूँ,
मैं मरघट से जिन्दगी बुला लाया हूँ,
हूँ आख-मिचौनी खेल चुका क्रिस्मत से,
सौ बार मृत्यु के गाल चूम आया हूँ,
है नहीं मुझे स्वीकार दया धनो भी,
तुम मत मुझ पर कोई महसान करो ।

मैं तूफानों में चलने का आदी हूँ
तुम मत मेरी मजिल आसान करो !

धम के जल से ही राह सदा सिंचती है,
 गति की मजाल आधी म ही हँसती है,
 झूलो से ही शृङ्गार पथिक का होता,
 मजिल की माँग लहू से ही सजती है,
 पग में गति आती है छाते छिलने से,
 तुम पग पग पर जलती चट्टान धरो ।

मैं तूफानों में चलने का आदी हूँ
 तुम मत मेरी मजिल आसान करो !

फूलों से मग आसान नहीं होता है,
 रुकने से पग गतिवान नहीं होता है,
 अवरोध नहीं तो सम्भव नहीं प्रगति भी,
 है नाश जहाँ निर्माण वही होता है,
 मे वसा सकूँ नव स्वर्ग धरा पर जिससे,
 तुम मेरी हर वस्ती धीरान करो ।

मैं तूफानों में चलने का आदी हूँ
 तुम मत मेरी मजिल आसान करो !

मैं पत्थी तूफानों में राह बनाता,
 मेरा दुनियाँ से केवल इतना नाता—
 वह मुझे रोकती है अगर विद्याकर,
 मैं ठोकर उसे लगाकर चड़ता जाता,
 मैं ठुकरा सकूँ तुम्हें भी हँसकर जिससे,
 तुम मेरा मन-मानस पापाएँ करो ।

मैं तूफानों में चलने का आदी हूँ
 तुम मत मेरी मजिल आसान करो !

में अकपित दीप...

२२

में अकपित दीप प्राणों का लिये,
यह तिमिर तूफान मेरा क्या करेगा ?

बन्द मेरी पुतलियों में रात है,
हास बन विखरा अघर पर प्रात है,
मैं पपीहा, मेघ क्या मेरे लिये,
खिन्दगी का नाम ही बरसात है,
साँस में मेरी उनन्चासों पवन,
यह प्रलय पवमान मेरा क्या करेगा ?
यह तिमिर तूफान मेरा क्या करेगा ?

कुछ नहीं डर वायु जो प्रतिह्वल है,
धीर पैरो में बसकता धूल है,
क्योंकि मेरा तो सदा अनुभव मही,
राह पर हर एक काँटा फूँन है,
बड रहा जब मैं लिये विस्वाप्त मह,
पन्य यह बीरान मेरा क्या करेगा ?
यह तिमिर तूफान मेरा क्या करेगा ?

मुश्किलें मारग दिखाती हैं मुझे,
 आफतें बढना बताती हैं मुझे,
 पन्थ की उत्तुङ्ग दुर्दम घाटियाँ
 ध्येय-गिरि चढना सिखाती हैं मुझे,
 एक भू पर, एक नम पर पग मेरा,
 यह पतन-उत्थान मेरा क्या करेगा ?
 — निमिर तूफान मेरा क्या करेगा ?

यह संभव नहीं है...

२३

पन्थ की कठिनाइयों से मान लूँ मैं हार—यह संभव नहीं है

मैं चला जब रोकने दीवार सी दुनियाँ खड़ी थी
मैं हँसा तब भी बनी जब आँसू सावन की झड़ी थी,
उस समय भी मुस्कराकर गीत मैं गाता रहा था,
जब कि मेरे सामने ही लाश खुद मेरी पड़ी थी,
आज है यदि देह लयपय, रक्तमय पग, कटकित ना,
फेंके दूँ निज शीश का मैं भार—यह संभव नहीं है !
पथ की कठिनाइयों से मान लूँ मैं हार—यह संभव नहीं है !

चल रहा हूँ मैं इसी से चल रहा हूँ निराला न
जल रहा हूँ मैं इसी से हो गईं टूटनी निराला न
रात मेरी आँसू का काजल बुझाने में नहीं है
धीनकर उधवास मेरे बन गईं इतनी निराला न
आज मेरी चेतना ही से कि जन जेठ निराला न
मैं बनूँ जड़ धूल का आधार—यह संभव नहीं है
पन्थ की कठिनाइयों से मान लूँ मैं हार—यह संभव नहीं है

पूँछती है एक मुभले प्रश्न फिर फिर सृष्टि सारी—
 'क्या तुम्हारी भाँति ही व्याकुल पथिक ! मजिल तुम्हारी ?'
 कौन उत्तर दूँ भला मैं सिर्फ इतना जानता हूँ,
 राह पर चलती हमारे साथ ही मजिल हमारी,
 आज तम में वह अगर घोभल हुई है लोचनो से,
 मैं कहूँ उसकी न सुधि साकार—यह संभव नहीं है !
 पन्थ की कठिनाइयो से मान लूँ मैं हार—यह संभव नहीं है !

मैं मुसाफिर हूँ कि जिसने है कभी रुकना न जाना,
 है कभी सोसा न जिसने मुश्किलों में सर झुकाना,
 क्या मुझे मजिल मिलेगी या नहीं—इसकी न चिन्ता,
 क्योंकि मजिल है उगर पर सिर्फ चलने का बहाना,
 और तो सब धूर, पथ पर चाह चलने की अमर वस,
 मैं अमर पद का न लूँ अधिकार—यह संभव नहीं है !
 पन्थ की कठिनाइयों से मान लूँ मैं हार—यह संभव नहीं है !

कर्म रत-जग, हर दिशा से कर्म की आवाज आती,
 काल की गति एक क्षण को भी नहीं विथाम पाती,
 मैं रूकूँ भी तो मगर यह रास्ता रुकने न देगा,
 राह पर चलते न हम ही, राह भी हमको चलाती,
 आज चलने के लिये जब धूल तक ललकारती है—
 पन्थ की कठिनाइयो से मान लूँ मैं हार—यह संभव नहीं है !

नयन तुम्हारे . . .

२४

बदल गये अब नयन तुम्हारे ।

माय साय हम बले डगर पर,
मैं रो रोकर, तुम हँस हँस कर,
लिये गोद में किन्तु न तुमने मेरे छूटू विचारे :
बदल गये अब नयन तुम्हारे ॥

जिनमें स्नेह-सिन्दू बहता,
प्रीति नग काजल चुकाता,
देखे उनमें धान धूरा के धरक रहे झरते ।
बदल गये अब नयन तुम्हारे ॥

सोच रहा मैं पुरानी स,
विजना बलिग प्रेम का कल,
वहीं गये हर बार उनी हूँ उनी उनी हूँ ।
बदल गये अब नयन तुम्हारे ॥

ऐसे भी क्षण आते . . .

२५

अरे ! ऐसे भी क्षण आते ।

प्राण-व्यथा जिसको रो रो कर,
हम चाहते सुनाना क्षण भर,
आकर पर उसके सम्मुख ही
रोते रोते हम सहसा मुस्काने लग जाते ।
अरे ! ऐसे भी क्षण आते ॥

पागल हो तलाश में जिसकी,
हम खुद बन जाते रज मग की,
किन्तु प्राप्ति की व्याकुलता में
कभी कभी हम मंजिल से भी आगे बढ़ जाते ।
अरे ! ऐसे भी क्षण आते ॥

जिसकी पूजा जीवन की गति,
पय-पाथेय मधुर जिसकी स्मृति,
मचल उसी आराध्य से कभी
हम अपनी ही पूजा करवाने को श्रुलाते ।
अरे ! ऐसे भी क्षण आते ॥

इतना तो बतलाते...

३६

निष्ठुर इतना तो बतलाते !

कौन भूल ऐसी की हमने,
जो यह दंड दिया है तुमने,

धमते मथु न और भूलकर होठ कभी मुस्काते ।
निष्ठुर इतना तो बतलाते !

तोड़ प्रेम के बन्धन सारे,
जाना था यूँही यदि प्यारे !

से जाने निज याद, हृदय मेरा मुझको दे जाते ।
निष्ठुर इतना तो बतलाते !

बाबर बरत गयो

तो अकुलाते प्राण न इतने,
तो न विलखते दूटे सपने,
हम भी आकर द्वार तुम्हारे तुम पर धूल उड़ाते ।
निष्ठुर इतना तो बतलाते !

हैं जग में सुन्दर से सुन्दर,
बहुत देवता, जो पूजा पर,
कर देते खुद को न्यौछावर,
किन्तु हमारी कमजोरी यह—
उनको ही पूजते सदा हम जो पूजा ठुकराते !
निष्ठुर इतना तो बतलाते !

तेरी भारी हार...

२७

हुई थी तेरी भारी हार ।
मन बोला भ्रम भक्ति न होगी,
पूजा में अनुरक्ति न होगी,
देने को वरदान देवना हुआ कि जब तैयार ।
हुई थी तेरी भारी हार ॥

पग बोला क्षण भर भी मैं भ्रम,
चल न सकूंगा इस पथ पर, जब
मजिल थी रह गयी दूर वस केवल पग दो चार ।
हुई थी तेरी भारी हार ॥

कठ रना सहना यह कहकर
रह अनसुना ही मेरा स्वर,
मुगरित होने वाला था जब गीतों से सत्तार ।
हुई थी तेरी भारी हार ॥

स्वीकार....

२८

अब नहीं मुझको दया स्वीकार !

है गरजता आंसुओं का सिन्धु खारा,
डूबता हूँ मैं, न पर तुम दो सहारा,
क्योंकि अब तो पार उतरूँगा तभी मैं
पार मुझको जब लगायेगी यही मैंभधार !
अब नही मुझको दया स्वीकार !!

बादर बरस गयो

नीड टूटा, मैं निराश्रित, पख हा
पर न खोलो तुम हृदय-गूह-द्वार प्यारे
मैं वसेरा अब तभी लूंगा कभी जब,
नीड मेरा खुद करेगी विजलियाँ तैयार !
अब नहीं मुझको दया स्वीकार !!

प्यास मन में तीव्र, चारो ओर मरुतल,
मैं विकल हूँ, पर न दो तुम वृष्टि का जल,
प्यास में अब तब बुझाऊंगा अघर पर-
ग्रास से मेरी गिरेगी जब लहू की धार !
अब नहीं मुझको दया स्वीकार !!

पराजय भी फिर जय है...

२६

यदि मन अजित-अजेय, पराजय भी फिर जय है ।

भ्रूलुठित भुजचक्र, किरीट, कवच, कल कुडल,
टूक टूक तूणीर, खड कोदण्ड, दण्ड-बल,
श्रीहत शयित धरायित पैन्थ सनी शोणित मे,
क्षत-विक्षत शिर-वक्ष, न कोई साथी-सम्बल,
पर जब तक लालसा समर की शेष रक्त मे,
हार हार यह नही, विजय ही अजर अजय है ।
यदि मन अजित-अजेय, पराजय भी फिर जय है ।

अर्घ्य नही, आरती नही, हो नही अर्चना,
कर्म नही, साधना नही, हो नही वन्दना,
ध्यान नही, धारणा नही, हो नही देवता,
फल न चन्दन, भोग न पूजा, नही प्रार्थना,
पूजा की भावना पुजारी में पर जब तक,
भुके जहां भी शीश वही तो देवालय है ।
यदि मन अजित-अजेय, पराजय भी फिर जय है ।

बाबर बरस गयो

सुप्त सिनारे, चांद, गगन, भू, सुप्त दिशायें,
सुप्त विजन वन, सुप्त पात, द्रुम, सुप्त हवायें,
सपनों के जादूघर में लो गईं पुतलियां,
सुप्त प्रणय के गान, प्राण की सुप्त व्यथायें,
पर जब तक छल रहा चकोरी को शशि निष्ठुर
यह निद्रालस-रास जागरण का अभिनय है।
यदि मन अजित-अजेय, पराजय भी फिर जय है।

धू धू जलती घरा उगलती आग-अंगारे,
ताप-अस्त नभ, खोल रहे मरि-नागर नारे,
पीत पात, सखे सूखे तर, नंगी डालें,
फूल, कली, मधु, गध न, मधुकर दूर छिनारे,
बुलबुल के दिल में पर जब तक बाद वन्दन नै
यह पतझर तूफान मदिर मधुवान मन्दन है।
यदि मन अजित-अजेय, पराजय भी फिर जय है।

यह कैसा आश्चर्य कि युग-व्यापी जीवन का
 धामे कर मे सून इशारा केवल मन का ?
 इतनी बडी धरा पर संचालित ऋतु से बस ?
 एक क्षुद्र सा फूल रूप सारे उपवन का ?
 एक बूंद ही तो समुद्र की गहराई है,
 एक सत्य ही तो सौ सपनों का आश्रय है ।

यदि मन अजित-अजेय, पराजय भी फिर जय है ॥

चांदी का यह देश...

३०

चांदी का यह देश, यहाँ के छविदा राजकुमार,
सोच समझकर करना पन्थी यहाँ किरी के प्यार,
हृदय-अन्तः ।

यहाँ बिसे प्रवकाश हुने जो देते कल, कगर्ते,
तुम्ह पर करे बजार यहाँ कर्ते है किरी के बाहे,
बादन बन कर मोद रहे है किरी के प्रवकाश में,
कोन यहाँ व्यष्टुन है किरी के देते निपाहे,
पूतों को यह हृदय का है किरी का मेसा,
कोन सपने के कल प्रभु दो पार ।
सोच समझकर कल कर्ते यहाँ किरी के प्यार ॥

यहाँ प्रीति की माँग घृणा से ही पूरी जाती है,
 हाथ हृदय देकर भी दुनियाँ अंगारे पाती है,
 सर्वस लेकर भी, न शताभ को शमा कफन तक देती,
 रोज़ कली के लिये भ्रमर की अर्थी अकुलाती है,
 यहाँ सूर्य के शव पर दीपावली मनाती संघ्या,
 और साँझ की चुम्बी चिता पर करता चाँद विहार ।
 सोच समझकर करना पन्थी यहाँ किसी से प्यार ॥

देख ! हलाहल बाँट रही है मधु कह कर मधुवाला,
 और आग के फूल छिपाये लहरो की हर माला,
 बुलबुल का दिल चीर देल वह छली गुलाब खड़ा है,
 लिये निशा की लाश आ रहा है हँसता उजियाला,
 पीने ही को प्यास धरा की धिरती यहाँ बदरिया,
 लाने को पतझर चमन में करती नृत्य बहार ।
 सोच समझकर करना पन्थी यहाँ किसी से प्यार ॥

डाले हुए रूप का घूँघट खड़ी यहाँ निष्ठुरता,
 पिये प्रणय का रक्त थिरकती इठलाती मुन्दरता,
 अरे कली की भोली चोली में विपघर बैठा है,
 और प्यार की सरल गोद में छिप छल अभिनय करता,
 एक किरण दे यहाँ हज़ारों दोष बुझाती ऊषा,
 एक बूँद बरसा करता घन सौ सौ वज्र-प्रहार ।
 सोच समझकर करना पन्थी यहाँ किसी से प्यार ॥

बादर बरस गयो

कभी किसी ने यहाँ घ्राण की पीर नहीं पहचानी,
घ्रांसू की आवाज यहाँ तो सदा रही अनजानी,
कभी किसी का यहाँ न कोई सपना पूरा होना,
और अघूरी सदा रही है सबकी प्रेम-कहानी,
यहाँ प्रेम की मृत्यु, मृत्यु से पहले हो जाती है,
उससे भी पहले होती है किन्तु चिता तैयार ।
सोच समझकर करना पन्थी यहाँ किसी से प्यार ॥

धर्म है***

२१

जिन मुश्किलों में मुस्कराना हो मना,
उन मुश्किलों में मुस्कराना धर्म है ।

जिस वक्त जीना गैर-मुमकिन सा लगे,
उस वक्त जीना फर्ज है इन्सान का,
नाजिम लहर के साथ है तब खेलना,
जब हो समुन्दर पर नशा तूफान का,
जैसे वायु का दीपक बुझाना ध्येय हो,
उस वायु में दीपक जलाना धर्म है ।

जिन मुश्किलों में मुस्कराना हो मना
उन मुश्किलों में मुस्कराना धर्म है !!

बादर बरस गयो

हो ही नहीं मजिल कही जिस राह की
उस राह चलना चाहिये ससार को,
जिस दर्द से सारी उमर रोते कटे,
वह दर्द पाना है जरूरी प्यार को,
जिस चाह का हस्ती मिटाना नाम है,
उस चाह पर हस्ती मिटाना धर्म है ।

जिन मुश्किलो में मुस्कराना हो मना
उन मुश्किलो में मुस्कराना धर्म है ॥

आदत पडी हो भूल जाने की जिसे,
हर दम उसी का नाम हो हर सांस पर,
उसकी खबर में ही सफर सारा कटे,
जो हर नजर से हर तरह हो बेखबर,
जिस आँख का आँखें चुराना काम हो,
उस आँख से आँखें मिलाना धर्म है ।

जिन मुश्किलो में मुस्कराना हो मना,
उन मुश्किलो में मुस्कराना धर्म है ॥

जब हाथ से दूटे न अपनी हथकडी,
तब माँग लो ताकत स्वयं जज़ीर से,
जिस दम न धमती हो नयन-सावन-भङ्गी,
उम दम हँसी ले लो किसी तस्वीर से,
जब गीत-गाना-गुनगुनाना जुर्म हो,
तब गीत-गाना-गुनगुनाना धर्म है ।

जिन मुश्किलो में मुस्कराना हो मना,
उन मुश्किलो में मुस्कराना धर्म है ॥

अधिकार जब अधिकार पर शासन करे,
 तब छीनना अधिकार ही कर्तव्य है,
 सहार ही हो जब सृजन के नाम पर
 तब सृजन का सहार ही भवितव्य है,
 बस गरज यह गिरते हुए इन्सान को,
 हर तरह, हर विधि से उठाना धर्म है !

जिन मुश्किलों में मुस्कराना हो मना,
 उन मुश्किलों में मुस्कराना धर्म है!!

फूल हो जो...

३२

फूल हो जो धूल से शृङ्गार करता है,
जिन्दगी के साय में सिलवार करता है ।

क्योकि है यह जिन्दगी रंगीन छया-रव,
भोर का उजियार है जग का मुनहरे नन,
स्वप्न-वन तन है कि जिममें प्राण का चंदा
स्वाम-निनको से रहा कुन नृपु-नाइ फुल,
इसलिये हंस मृत्यु नी म्वाकार करता है
और विप को नी अनृत को धार करता है :

जानता है राह पर दो दिदि नने नन,
भाज ही तक फिडं है यह नान न ननुन
रात नर के ही निडं है ननु ननुन
भाजनी कन ही पडेगी ननु ननुन
इसलिये हन ननु ननु ननुन
फूल का ननु ननु ननु ननुन

प्राण! है अपना यहाँ वस कुछ क्षणों का साथ,
 कल अलग होना हमें होगा बिना कुछ बात,
 रात की जब तक सजी है सेज शर्मीली,
 है बँधा भुजपाश में तब तक तुम्हारा गात,
 इसलिये हर रात को अभिसार करता हूँ,
 और दिन में याद को साकार करता हूँ ।

तुम मुझे इसके लिये चाहे करो बदनाम,
 क्यों न कितने ही घुरे मेरे घरो तुम नाम,
 दड भी चाहे कठिन तुम दो मुझे इतना
 डूब जाये आँसुओं में हर सुबह, हर शाम,
 पर यही अपराध मैं हर बार करता हूँ—
 'आदमी हूँ, आदमी से प्यार करता हूँ ।'

कल का करो न ध्यान...

३३

भाज पिला दो जी भर कर मधु पल का करो न ध्यान सुनपने !
कल का करो न ध्यान ।

सभव है कल तब मिट जाये मधु के प्रति भावपंरा मन का,
मधु पीने के लिये न हो कल सभव है सकेन गगन का,
पीने और पिलाने को हम ही न रहें कल सभव दर न
पल पल पर झरझोर रहा है काल प्रसन्न दान्त जेहन का,
कौन जानता है कब किस पल तार तार इन्ग है ते नरे
जीवन क्या-गाँसों के कच्चे धागों का इन्धन सुन्दरों का
कल का करो न ध्यान ।

क्या मालूम घिरी न घिरी कल यह मनभावन घटा गगन में,
 क्या मालूम चली न चली कल यह मृदु मन्द पवन मधुवन में,
 स्वर्ग नर्क को भूल आज जो गीत गा रही लालपरी के,
 क्या मालूम रही न रही कल मस्ती वह दीवानी मन में,
 धनमार्गे वरदान सदृश जो छलक उठा मधु जीवन-घट में,
 क्या मालूम वही कल विष वन, बने स्वप्न-अवसान सुनयने ।
 कल का करो न ध्यान ॥

मस्त कनखियो से साकी की जहाँ सुरा हरदम भरती थी,
 पायल की रुनभुन धुन में आवाज मौत की भी मरती थी,
 मदिरा की रगीन चुनरिया ओढ़ महल में मदिरालय के
 कलियो की मुस्कानो से वासना सिंगार जहाँ करती थी,
 आज किन्तु उस वृषा-तीर्थ के शेष चिन्ह केवल दो ही थे—
 मरघट सा सूना भयावना, और भूंकते श्वान सुनयने ।
 कल का करो न ध्यान ।

और इधर इस पय पर तो कल घिरा मौत का था अंधियाल
 टूक टूक हो पडा घूल में सिसक रहा था माणिक प्याल
 मधु तो दूर, गरल की भी दो बूंदें थी न नयन के सम्मुख
 लेता था उख्वास तिमिर में पडा विमुग्ध मन पीने वाल
 आज अचानक ही पर जो तुम हो, मैं हूँ, मधु है, बदली
 इसका अर्थ यही कि चाहता विधि भी हो मधुपान सुनयने
 कल का करो न ध्यान

जीवन में ऐसा शुभ अवसर कभी कभी ही तो आता है—
 प्यासे के समीप ही जब खुद मदिरालय दौड़ा जाता है,
 वह अज्ञानी है अग जग के मिथ्या तर्कों में पडकर जो
 तो ऐसा वरदान अन्त तक कर मल मल कर पड़ता है,
 शयं न मुझे वनाग्रो इसमें पाप, पुण्य की परिभाषाएँ,
 न्तु हूँ मधु में सब कुछ बनने दो एक सनात नुनपने !
 कल का करो न ध्यान ॥

पीकर भी यदि ध्यान रहा कल का तो व्यर्थ पितामा मन हो,
 व्यर्थ सुराही की गहराई, व्यर्थ सुरा नुरनिज चित्रवन हो,
 मदिरा नहीं, किन्तु मदिरा के प्यासे में नृगज्ज केदन इह
 पीकर जिसे न भूत सके मन चिन्ता जीवन शौर नग्गुनी,
 मस्ती भी वह मस्ती क्या जो देन कान की नृहुदि-नगिनि,
 भूल जाय गाना जीवन की मदिरा तथा का मन नुनपने !
 कल का करो न ध्यान ॥

त 'भाज-कल' का यह प्रेमनि ! शुभ सुप से वरणा इत्तु इ
 किन्तु कभी क्या कोई जग में मीना कल की नृनुन है ?
 जीवन के दो ही दिन जिनमें भाज इत्तु शौर नग्गुनी,
 कल की भास लिये नारा जग शौर जिना हो ही बरता है,
 प्रिय ! इससे अरमानों की इस मात्र नरग कर्णों की सिद्धि हो,
 बन जाने भी दो मुद्गा की एत छोर हूँ, मन नुनपने !
 कल का करो न ध्यान ॥

तुम्हें मेरी कसम है...

३४

आज तो मुझसे न शरमाओ—तुम्हें मेरी कसम है ।

आज बरसो बाद घायल पीर क्षण भर सो सकी है,
आज बरसो बाद गुंगी चाह मुखरित हो सकी है,
आज युग के बाद मेरी रात में दो चाँद चमके,
आज युग के बाद मेरी व्यास ओठ भिगो सकी है,
आज चुम्बन की लगी बरसात अघरो की गली में,
बीच में दीवार सी फिर क्यों खड़ी सहमी शरम है ?

आज तो मुझसे न शरमाओ—तुम्हें मेरी कसम है ।

चाँदनी तरु के तने अभिसार तम ने बर रही है,
 ओस गालों पर कली के चुम्बनो सी भर रही है,
 रात के उमरे उरोजो में छिपाये चाँद मुखड़ा,
 वह लता तरु की जवानी बाहुओं में भर रही है,
 आँधियाँ अँगड़ा रही हैं आज बण-नण में घरा के,
 आज ठडी सृष्टि की चोली गरम, बोली नरम है।
 आज तो मुम्म न शरमाओ-तुम्हें मेरी कसम है।

बाहुओं की घाटियों में यह नदी जँसी जवानी,
 आज बँधने को हुई लाचार लेकर आग पानी,
 आज अघरो से अघर पर एक लिख दो गीत कोई,
 और पढ लो आँख से सब अनकही मेरी कहानी,
 मत हटाओ ओठ इस डर से कि जूठे हो न जायें
 प्यार ने प्रेयसि ! कभी माना नहीं कोई नियम है।
 आज तो मुमसे न शरमाओ-तुम्हें मेरी कसम है।

धुट चुसी रातें हजारों आज तब वह रात अर्द्ध,
 हो गये नौ मिन्यु मर तब आँसु अब दर मुन्नाज
 वह गये लाग़ा महल तब नच हुआ वह एक नर
 मोटि पिय-पट चुन गये तब एक दर मुन्नाज
 इसलिए कल पर न टालो आज की इन्तज़ार
 प्रिय ! मिनन के बान्ने वह रात अर्द्ध मुन्नाज
 आज तो मुमसे न शरमाओ-तुम्हें मेरी कसम है।

घाबर बरस गयो

मत कहो ससार कल हम पर करेगा क्या इशारे,
मत सुनो क्या कर रहे हैं धर्म के विध्वंस सारे,
बस छिपा लो आज मेरी आगू अपने बक्ष मे तुम,
डूब जाने दो सदा को आज के सब चाँद, तारे,
यदि मिला अवकाश तो कल धर्मग्रन्थो को पढूँगा
आज तो लेकिन समर्पण ही सुमुखि ! अपना धरम है ।
आज तो मुझसे न शरमाओ तुम्हे मेरी कसम है ॥

३५

अब बुलाऊँ भी तुम्ह तो तुम न घाना ।

हूट जाये शीघ्र जिससे आस मेरी
छूट जाये शीघ्र जिससे साँस मेरी,
इसलिये यदि तुम कभी आओ इधर तो
द्वार तक आकर हमारे लौट जाना ।

अब बुलाऊँ भी तुम्हें ॥

देख लूँ मैं भी कि तुम किनो निठुर हो,
किस कदर इन आँसुओं से बेग़मर हो,
इसलिए जय सामने आकर तुम्हारे
मैं बहाऊँ अनु तो तुम मुस्कराना ।

अब बुलाऊँ नी तुम्हें -॥

जान लूँ मैं भी कि तुम कँचे पिंकाये,
चोट कँसी तीर की हात्रीं तुम्हारे,
इसलिए पापल हृदय लेकर दग है
तो लगामो साधकर मरना निगाना ।

अब बुलाऊँ नी तुम्हें -॥

बादर बरस गयो

एक भी अरमान रह जाये न मन मे,
अग्री' न मचले एक भी आँसू नयन मे,
इसलिये जब मै महेँ तव तुम घृणा से
एक ठोकर छाश में मेरी लगाना ।

अब बुलाकेँ भी तुम्हे ॥

आज मेरी गोद में...

३६

आज मेरी गोद में धरमा रहा कोई,
चाँद से कह दो नहीं वह मुम्बराये ।

जा बहारो से बहो बोले न बुलबुल
क्योंकि अनबोली कहानी चल रही है,
जा सितारो के बुमा दो दीप सारे
क्योंकि पानी बन जवानो जल रही है,

अब पिया को और मन टेरें फोड़ा
क्योंकि सीने में घड़कता दिन किन्नी बा,
करवटें बदले न लहरों की झगड़
क्योंकि हूबा जा रहा साहिन किन्नी बा,

आज सपना हो गया सागर झुलुह
रात से बोनी न कह नने नरने ।
चाँद से कह दो नहीं वह मुम्बराये ॥

आज प्यासी वाहूओ के कुँजवन में
सागरो की देह शरमाई पडी है,
डगमगाते गर्म ओठो की शरण मे
आग की आँधी बुलाई सी खडी है,

आज लगता है कि पलको की सतह पर
सो रहा है अनमना तूफान कोई,
जान पडता है कि साँसो से उलभकर,
रह गया है एक रेगिस्तान कोई,

आज जो मुझको छुयेगा वह जलेगा
इसलिये कोई न अब उँगली उठाये ।
चाँद से कह दो नही वह मुस्कराये ॥

आज पहली बार अपनी जिन्दगी मे,
कर रहा महसूस-मै भी जी रहा हूँ,
आज पहली बार होकर बेखबर मैं
हर कसम पर बे पिये ही पी रहा हूँ,

आज पहली बार ही मानो न मानो
सो सका हूँ खोल कर मे आँख अपनी,
आज पहली बार साँसो के सफर में
हो सकी है एक अपनी चीज अपनी,

आज मैं अनमोल हूँ बेमोल विक कर
जग न अब मेरी कही कीमत लगाये ।
चाँद से कह दो नही वह मुस्कराये ॥

बाबर बरस गयो

७५

आज मत पूँछो कि मैं क्या कर रहा हूँ,
और है क्या कह रहा ससार सारा,
आज मुझको भय नहीं है काल का भी,
आज मेरा प्राण है जलता अँगारा,

प्रश्न तो ससार के हरदम हुये हैं
और होते हों रहेगे जिन्दगी भर,
पर न आयेगी कभी यह रात फिर से,
पर मिलोगो फिर न तुम जीवन-डगर पर,

इसलिये यदि द्वार आये मुक्ति भी तो
बेइजाजत आज वह भी लौट जाये ।
चाँद से कह दो नहीं वह मुस्कराये ॥

अभी न जाओ प्राण !.....

३७

अभी न जाओ प्राण ! प्राण में प्यास शेष है,
प्यास शेष है ।

अभी वहनियों के कुञ्जों में छितरी छाया,
पलक-पात पर थिरक रही रजनी की माया,
श्यामल यमुना सी पुतली के कालीदह में
अभी रहा फुफकार नाग वीखल वीराया,
अभी प्राण-वसीवट में बज रही वँसुरिया,
अघरों के तट पर चुम्बन का रास शेष है ।
अभी न जाओ प्राण ! प्राण में प्यास शेष है,
प्यास शेष है ।

अभी स्पर्श से सेज सिहर उठती है क्षरा-क्षर,
 गल-माला के फूल फूल में पुलकित कम्पन,
 खिनक खिनक जाता उरोज ने अभी लाज-पट,
 अग अग में अभी अनग-नरगित-नयंर,
 केलि-भवन के तरण दीप की स्प-सिन्धा पर,
 अभी शलन के जलने का उल्लास शेष है।
 अभी न जाओ प्राण ! प्राण में प्यास शेष है,
 प्यास शेष है।

अगस्त-गघ में मत्त वक्ष का कोना ओना,
 सजग द्वार पर निगि-प्रहरी मुकुमार सनोना,
 अभी खोलने मे कुनमुन बरने रूह के पट
 देखो सावित्र अभी विरह का चन्द्र-निर्दोना,
 रजन चाँदनी के मुमार में अकित अकित-
 प्रांगन की आँसो में नीलाकान शेष है।
 अभी न जाओ प्राण ! प्राण में प्यास शेष है,
 प्यास शेष है।

अभी तहर तट के आलिन में है सीरें,
 अलिनी नोन कन्द के रज रज में सीरें,
 पवन पंठ की दाँतों पर दूँक ना मुकुल,
 अभी तागदों में मरिग मुकुल सीरें,
 एक नगा ना ब्यात मरुत दूँके कृष्ण पर,
 अभी दृष्टि में एक अकित-निर्दोना शेष है।
 अभी न जाओ प्राण ! प्राण में प्यास शेष है,
 प्यास शेष है।

अभी मृत्यु सी शान्ति पड़े सूने पथ सारे,
 अभी न ऊपा ने खोले प्राची के द्वारे,
 अभी मौन तरु-नीड, सुप्त पनघट, नौकातट,
 अभी कारवाँ के न जगे सपने निंदियारे,
 अभी दूर है प्रात, रात के प्रणय-पत्र मे—
 बहुत सुनाने सुनने को इतिहास शेष है ।
 अभी न जाओ प्राण ! प्राण में प्यास शेष है,
 प्यास शेष है ॥

मगर निठुर न तुम रूके....

३८

मगर निठुर न तुम रूके, मगर निठुर न तुम रूके !

पुकारता रहा हृदय, पुकारते रहे नयन,
पुकारती रही मुहाग-दीप की फिरन फिरन,
निशा-दिशा, मिलन विरह विदग्ध टेरते रहे,
बराहती रही सतज्ज सेज की शिपन शिपन,
मसख्य श्वाम बन ममीर पय बुहारते रहे,
मगर निठुर न तुम रूके !

बादर बरस गयो

पकड चरण लिपट गये अनेक अश्रु धूल से,
गुँथे सुवेश केश मे अशेष स्वप्न फूल से,
अनाम कामना शरीर छाँह बन चली गई,
गया हृदय सदय वैधा विधा चपल दुकूल से,
विलस विलस जला शलभ समान रूप अधजला,
मगर निठुर न तुम हके !

विफल हुई समस्त साधना अनादि अर्चना,
असत्य सृष्टि की कथा, असत्य स्वप्न-कल्पना,
मिलन बना विरह, अकाल मृत्यु चेतना बनी,
अमृत हुआ गरल, भिखारिणी अलम्य भावना,
सुहाग-शीश-फल टूट धूल मे गिरा मुरझ—
मगर निठुर न तुम हके !

न तुम हके, हके न स्वप्न रूप-रात्रि-गोह में,
न गीत-दीप जल सके अजस्र-अश्रु-मेह मे,
धुँआ धुँआ हुआ गगन, घरा बनी ज्वलित चिता,
अंगार सा जला प्रणय अनंग-अक-देह मे,
मरण-विलास-रास-प्राण-कूल पर रचा उठा,
मगर निठुर न तुम हके !

अकाश मे न चाँद अब, न नीद रात में रही,
न साँभ में शरम, प्रभा न अब प्रभात मे रही,
न फूल मे सुगन्ध, पात में न स्वप्न नीद के,
सँदेस की न बात वह वसन्त-वात मे रही,
हठी असह्य सौत यामिनी बनी तनी रही—
मगर निठुर न तुम रके ।

पकड चरण लिपट गये अनेक अथु धूल से,
 गुँथे सुवेश वेश मे अशेष स्वप्न फूल से,
 अनाम कामना शरीर छाँह बन चली गई,
 गया हृदय सदय वैधा विधा चपल दुक्कल से,
 विलख विलख जला शलभ समान रूप अधजला,
 मगर निठुर न तुम रूके !

विफल हुई समस्त साधना अनादि अर्चना,
 असत्य सृष्टि की कथा, असत्य स्वप्न-कल्पना,
 मिलन बना विरह, अकाल मृत्यु चेतना बनी,
 अमृत हुआ गरल, भिखारिणी अलभ्य भावना,
 सुहाग-शीश-फूल टूट धूल मे गिरा मुरझ—
 मगर निठुर न तुम रूके !

न तुम रूके, रूके न स्वप्न रूप-रात्रि-गोह मे,
 न गीत-दीप जल सके अजस्र-अथु-मेह मे,
 घुँआ घुँआ हुआ गगन, धरा बनी ज्वलित चिता,
 अँगार सा जला प्रणय अनग-अक-देह मे,
 मरण-विलास-रास-प्राण-कूल पर रचा उठा,
 मगर निठुर न तुम रूके !

अकाश मे न चाँद अरु, न नीद रात मे रही,
न साँभ मे शरम, प्रभा न अरु प्रभात मे रही,
न फूल मे सुगन्ध, पात मे न स्वप्न नीड के,
सँदेस की न बात वह वसन्त-वात मे रही,
हूँठी असह्य सौत यामिनी वनी तनी रही—
मगर निठुर न तुम रूके ।

पकड चरण लिपट गये अनेक अश्रु धूल से,
 गुँथे सुवेश वेश मे अशेष स्वप्न फूल से,
 अनाम कामना शरीर छाँह बन चली गई,
 गया हृदय सदय वैधा विधा चपल दुकूल से,
 विलस विलख जला शलभ समान रूप अधजला,
 मगर निठुर न तुम रके !

विफल हुई समस्त साधना अनादि अर्चना,
 असत्य सृष्टि की कथा, असत्य स्वप्न-कल्पना,
 मिलन बना विरह, अकाल मृत्यु चेतना बनी,
 अमृत हुआ गरल, भिखारिणी अलम्य भावना,
 सुहाग-शीश-फूल टूट धूल मे गिरा मुरक—
 मगर निठुर न तुम रके !

न तुम रके, रके न स्वप्न रूप रात्रि-नोह मे,
 न गीत-दीप जल मके अजस-अश्रु-मेह मे,
 धुँआ धुँआ हुआ गगन, घरा बनी ज्वलित चिता,
 अँगार सा जला प्रणय अनग-अक-देह में,
 मरण-विलास-रास-प्राण-कूल पर रचा उठा,
 मगर निठुर न तुम रके !

अकाश में न चाँद अब, न नींद रात में रही,
न साँझ में शरम, प्रभा न अब प्रभात में रही,
न फूल में सुगन्ध, पात में न स्वप्न नींद के,
सँदेस की न बात वह वसन्त-बात में रही,
हठी असह्य सौत यामिनी बनी तनी रही—
मगर निठुर न तुम रहे !

पकड चरण लिपट गये अनेक अश्रु धूल से,
 गुँथे सुवेश केश मे अशेष स्वप्न फूल से,
 अनाम कामना शरीर छाँह बन चली गई,
 गया हृदय सदय बँधा विधा चपल दुकूल से,
 विलख विलख जला शलभ समान रूप अधजला,
 मगर निठुर न तुम रुके !

विफल हुई समस्त साधना अनादि अर्चना,
 असत्य सृष्टि की कथा, असत्य स्वप्न-कल्पना,
 मिलन बना विरह, अकाल मृत्यु चेतना बनी,
 अमृत हुआ गरल, भिखारिणी अलस्य भावना,
 सुहाग-शीश-फल टूट धूल में गिरा मुरझ—
 मगर निठुर न तुम रुके !

न तुम रुके, रुके न स्वप्न रूप-रात्रि-नेह मे,
 न गीत-दीप जल सके अजस्र-अश्रु-मेह मे,
 घुँआ घुँआ हुआ गगन, धरा बनी ज्वलित चिता,
 अंगार सा जला प्रणय अनग-अक-देह मे,
 मरण-विलास-रास-प्राण-नूल पर रचा उठा,
 मगर निठुर न तुम रुके !

बादर बरस गयो

अकाश मे न चाँद अब, न नीद रात मे रही,
न साँभ मे शरम, प्रभा न अब प्रभात मे रही,
न फूल मे सुगन्ध, पात मे न स्वप्न नीड के,
सँदेस की न बात वह वसन्त-वात मे रही,
हठी असह्य सौत यामिनी बनी तनी रही—
मगर निठुर न तुम रहे ।

नारी...

४०

अर्घं सत्य तुम, अर्घं स्वप्न तुम, अर्घं निराशा-आशा,
अर्घं अजित-जित, अर्घं सृष्टि तुम, अर्घं अदृष्टि-पिपासा,
आधी काया आग तुम्हारी, आधी काया पानी,
अर्धांगिनि नारी ! तुम जीवन की आधी परिभाषा ।

यदि मैं होता घन सावन का....

४१

यदि मैं होता घन सावन का ।

पिया पिया कह मुझको भी पपिहरी बुलाती कोई,
मेरे हित भी मृग-नयनी निज सेज सजाती कोई,
निरख मुझे भी थिरक उठा करता मन-मोर किसी का,
श्याम-सँदेसा मुझसे भी राधा मँगवाती कोई,
किसी माँग का मोती बनता ढल मेरा भी आँसू,
मैं भी बनता ददं किसी कवि कालिदास के मन का ।
यदि मैं होता घन सावन का ॥

भागे भागे चलती मेरे ज्योति-परी इठलाती,
माँक बत्ती के धूँधट से पीछे बहार मुस्काती,
पवन चढ़ाता फूल, बजाता सागर दास विजय का,
एषा एषित जग की पथ पर निज पलकें पोद्य बिछाती,
भूम भूम निज मस्त पनलियों की मृदु मँगवाई से,
मुझे पिलाती मधुवाला मधु धौवन आवरण का ।
यदि मैं होता घन सावन का ॥

अन्तिम बूंद...

४२

अन्तिम बूंद बची मधु की अब जर्जर प्यासे घट जीवन मे ।

मधु की लाली से रहता था जहाँ विहँसता सदा सवेरा,
मरघट है वह मदिरालय अब घिरा मीत का सघन अंधेरा,
दूर गये वे पीने वाले जो मिट्टी के जड प्याले मे-
डुबो दिया करते थे हँसकर भाव हृदय का 'मेरा-तेरा',
रूठा वह साकी भी जिसने लहराया मधु-सिन्धु नयन मे ।
अन्तिम बूंद बची मधु की अब जर्जर प्यासे घट जीवन में ॥

अब न गूँजती है कानो मे पायल की मादक ध्वनि छम छम,
अब न चला करता है सम्मुख जन्म-मरण सा प्यालो का क्रम,
अब न दुलकती है अघरो से अघरो पर मदिरा की धारा,
जिसकी गति मे बह जाता था भूत, भविष्यत का सब भय, भ्रम,
टूटे वे भुजबन्धन भी अब मुक्ति स्वयं वैधती थी जिन मे ।
अन्तिम बूंद बची मधु की अब जर्जर प्यासे घट जीवन में ॥

जीवन की अन्तिम आशा सी एक बूंद जो बाकी केवल,
सम्भव है वह भी न रहे जब डुलके घट में काल-हलाहल,
यह भी सम्भव है कि यही मदिरा की अन्तिम बूंद सुनहली—
ज्वाला बन कर खाक बना दे जीवन के विष की बड़ हलचल,
क्योंकि आखिरी बूंद छिपाकर अगारे रखती दामन में ।
अन्तिम बूंद बची मधु की अब जर्जर प्यासे घट जीवन में ॥

जब तक बाकी एक बूंद है तब तक घट में भी मादकता,
मधु से घुलकर ही तो निखरा करती प्याले की सुन्दरता,
जब तक जीवित आस एक भी तभी तलक साँसों में भी गति,
आकर्षण से हीन कभी क्या जी पाई जग में मानवता ?
नींद खुला करती जीवन की आकर्षण की छाँह शरण में ।
अन्तिम बूंद बची मधु की अब जर्जर प्यासे घट जीवन में ॥

भाज हृदय में जाग उठी है वह व्याकुल तृप्णा यौवन की,
इच्छा होती है पी डालूँ बूंद आखिरी भी जीवन की,
अपरो तप ले जाकर प्याला किन्तु सोच यह हर जाना है,
इसके बाद चलेगी वैसे गति प्राणों के श्वास-धवन की,
और कौन होगा साथी जो बहलाये मन दिन दुर्दिन में ।
अन्तिम बूंद बची मधु की अब जर्जर प्यासे घट जीवन में ॥

अन्तिम वृंद...

४२

अन्तिम वृंद बची मधु की अब जर्जर प्यासे घट जीवन मे ।

मधु की लाली से रहता था जहाँ विहँसता सदा सबेरा,
मरघट है वह मदिरालय अब घिरा मीत का सघन अंधेरा,
दूर गमे वे पीने वाले जो मिट्टी के जड प्याले मे-
डुबो दिया करते थे हँसकर भाव हृदय का 'मेरा-तेरा',
रूठा वह साकी भी जिसने लहराया मधु-सिन्धु नयन मे ।
अन्तिम वृंद बची मधु की अब जर्जर प्यासे घट जीवन मे ॥

अब न गूँजती है कानो मे पायल की मादक ध्वनि छम छम,
अब न चला करता है सम्मुख जन्म-मरण सा प्यालो का क्रम,
अब न दुलकती है अघरो से अघरो पर मदिरा की घारा,
जिसकी गति मे बह जाता था भूत, भविष्यत का सब भय, भ्रम,
टूटे वे भुजबन्धन भी अब मुक्ति स्वय बँधती थी जिन मे ।
अन्तिम वृंद बची मधु की अब जर्जर प्यासे घट जीवन मे ॥

जीवन की अन्तिम आशा सी एक बूंद जो बाकी केवल,
समव है वह भी न रहे जब दुलके घट में काल-हलाहल,
यह भी समव है कि यही मदिरा की अन्तिम बूंद सुनहली—
ज्वाला बन कर धाक बना दे जीवन के विष की कट्ट हलचल,
क्योंकि आखिरी बूंद छिपाकर अगारे रखती दामन में ।
अन्तिम बूंद बची मधु की अथ जर्जर प्यासे घट जीवन में ॥

जब तक बाकी एक बूंद है तब तक घट में भी मादकता,
मधु से धुलकर ही तो निखरा करती प्याले की सुन्दरता,
जब तक जीवित आस एक भी तभी तलक साँसों में भी गति,
आकर्षण से हीन कभी क्या जी पाई जग में मानवता ?
नींद खुला करती जीवन की आकर्षण की छाँह शरण में ।
अन्तिम बूंद बची मधु की अथ जर्जर प्यासे घट जीवन में ॥

आज हृदय में जाग उठी है वह व्याकुल तृष्णा यौवन की,
इच्छा होती है पी डालूँ बूंद आखिरी भी जीवन की,
अधरो तब ले जाकर प्याला किन्तु सोच यह रक जाता है,
सबे वाद चलेगी वैसे गति प्राणों के श्वास-यवन की,
और कौन होगा साथी जो बहलाये मन दिन दुदिन में ।
अन्तिम बूंद बची मधु की अथ जर्जर प्यासे घट जीवन में ॥

आज न तुम वह, आज न मैं वह, आज न वे सपनों के बादल,
 आज न वे चुम्बन-आलिंगन, आज न वह प्राणों में हलचल,
 काल-पराजित गलबहियाँ वे, भृकुटि-विलास हुए अन्तर्हित,
 वे मोती सी रातों बीती, वे हीरो से दिवस गये ढल,
 समय भुला देता है सब कुछ, इसीलिए तो प्रेयसि मेरा—
 है भर गया घाव दिल का, पर हाय निशान अभी बाकी है ।
 स्वप्न मिटे सब लेकिन सपनों का अभिमान अभी बाकी है ॥

वह आई बरसात कि सीमा तोड़ नयन-सागर लहराया,
 सुख-दुख डूबे, सपने डूबे, डूबे प्राण, न कुछ बच पाया,
 वे तडकी बिजलियाँ कि लोचन अब तक खुल खुल भंग जाते हैं,
 ऐसा टूटा बच कि तब से हाय न मैं अब तक सो पाया,
 और आज अब शेष न वह बरसात, न बादल, बिजली, ओले,
 घुमड रहा नयनों में पर सुधि का तूफान अभी बाकी है ।
 स्वप्न मिटे सब लेकिन सपनों का अभिमान अभी बाकी है ॥

आँसू आज बहाता है तू मेरे मन अपने दुर्दिन पर,
 लेकिन यह तो सोच कि किसका साथ दिया सुख ने जीवन भर,
 सुख दुख देने को आता है, सपने मिटने को बनते हैं,
 'आने-जाने, बनने-मिटने' का ही नाम जगत यह सुन्दर,
 अरे हुआ क्या यदि तेरा सुख-स्वप्न-स्वर्ग ढह गया अचानक,
 करने को निर्माण मगर जग में वीरान अभी बाकी है ।
 स्वप्न मिटे सब लेकिन सपनों का अभिमान अभी बाकी है ॥

ऊबड़ खाबड़ पन्थ, घिरा है चारों ओर सघन अंधियारा,
नीचे धरती दूभर, ऊपर गरज रहा है अम्बर सारा,
सूनेपन का साथी कर का दीपक भी बुझ गया अचानक,
और डुवाने बढ़ी आ रही नयनों में आँसू की धारा,
आज न कोई भीत साथ दे जो इस पथ पर, लेकिन प्यारे !
हरदम तेरे साथ कंठ में तेरा गान अभी बाकी है ।
स्वप्न मिटे सब लेकिन सपनों का अभिमान अभी बाकी है ॥

भूल जाना...

४५

भूल पाओ तो मुझे तुम भूल जाना ।
साथ देखा था कभी जो एक तारा,
आज भी अपनी डगर का वह सहारा,
आज भी हैं देखते हम तुम उसे पर
है हमारे बीच गहरी अश्रु-धारा,
नाव चिर जंजर नहीं पतवार कर में
किस तरह फिर हो तुम्हारे पास आना ।
भूल पाओ तो मुझे तुम भूल जाना ।

सोच लेना पन्य भूला एक राही,
लख तुम्हारे हाथ में मधु की सुराही,
एक मधु की बूंद पाने के लिये बस,
रुक गया था भूल जीवन की दिशा ही,
आज फिर पथ ने पुकारा जा रहा वह,
कौन जाने अब कहाँ पर हो ठिकाना ।
भूल पाओ तो मुझे तुम भूल जाना ।

बादर बरस गयो

चाहता है कौन अपना स्वप्न टूटे ?
चाहता है कौन पय का साथ छूटे ?
रूप की अठखेलियाँ किसको न भाती,
चाहता है कौन मन का भीत रूठे ?
छूटता है साथ सपने टूटते पर,
क्योंकि दुस्मन प्रेमियो का है जमाना !

भूल पाओ तो मुझे तुम भूल जाना !

यदि कभी हम फिर मिलें जीवन-डगर पर,
मैं लिये आँसू, लिये तुम हास मनहर,
बोलना चाहो नहीं तो बोलना मत,
देख लेना किन्तु मेरी ओर क्षण भर,
क्योंकि मेरी राह की मंजिल तुम्ही हो,
ओर जीने का तुम्ही तो हो बहाना !

भूल पाओ तो मुझे तुम भूल जाना !

साँझ जब दीपक जलायेगी गगन में,
रात जब सपने सजायेगी नयन में,
पी यही जब जब पुकारेगा पपीहा,
मुस्करायेगी कली जब जब चमन में,
मैं तुम्हारी याद कर रोता रहूँगा,
किन्तु मेरी याद कर तुम मुस्कराना ।

भूल पाओ तो मुझे तुम भूल जाना !

जिसने दे मधु मुझे बनाया था पीने का चिर अभ्यासी,
 आज वही विष दे मुझको देखता कि वृष्णा कितनी प्यासी,
 करता हूँ इनकार अगर तो लज्जित मानवता होती है,
 अस्तु मुझे पीना ही होगा विष बनकर विष का विश्वासी,
 और अगर है प्यास प्रबल, विश्वास अटल तो यह निश्चित है
 कालकूट ही यह देगा शुभ स्थान मुझे शिव के आसन का ।
 वन्द करो मधु की रस-बतियाँ, जाग उठा अब विष जीवन का ॥

आज पिया जब विष तब मेने स्वाद सही मधु का पाया है,
 नीलकण्ठ बनकर ही जग में सत्य हमेशा मुस्काया है,
 सच तो यह है मधु-विष दोनों एक तत्त्व के भिन्न नाम दो
 धर कर विष का रूप, बहुत संभव है, फिर मधु ही आया है,
 जो सुख मुझे चाहिये था जब मिला वही एकाकीपन मे
 फिर लूँ क्यों अहसान व्यर्थ मे साकी की चंचल चितवन का ।
 वन्द करो मधु की रस-बतियाँ, जाग उठा अब विष जीवन का ॥

निभाना ही कठिन है...

४७

प्यार करना तो बहुत आसान प्रेयसि !
अन्त तक उसका निभाना ही कठिन है ।

है बहुत आसान ठुकराना किमी का,
है न मुस्किल भूल भी जाना किमी को,
प्राण-दीपक बीच सांसों की हवा में
याद की याती जलाना ही कठिन है ।

प्यार करना तो बहुत आसान प्रेयसि !
अन्त तक उसका निभाना ही कठिन है ।

स्वप्न बन जाए भर किमी स्वप्निल नयन के,
ध्यान-मन्दिर में किमी मीरा-भगन के
देवना बनना' नहीं मुस्किल, मगर भव-
भार पूजा का उठाना ही कठिन है ।
प्यार करना तो बहुत आसान प्रेयसि !
अन्त तक उसका निभाना ही कठिन है ।

पाकर निशि का तम, सूनापन,

जब शशि की एक शरीर किरन

सोते फूलो के गालो को हलके हलके सहलाती है ।

तब याद किसी की आती है ॥

उस पार उतारा करती नित,

जो जग के नर-नारी अगणित,

निशि को जब वही नाव सूनी इस पार पडी अकुलाती है ।

तब याद किसी की आती है ॥

उन्मुक्त भरोखे से आकर,

सिर, मस्तक मेरा सहला कर

जब प्रात उषा की किरन एक सोते से मुझे जगाती है ।

तब याद किसी की आती है ॥

प्यार नहीं मिलता है...

४६

प्यार सभी करते जग में पर
सब को प्यार नहीं मिलता है ।

अथक प्रतीक्षा में ऋतुपति की
सभी निकुञ्ज कुञ्ज उपवन वे,
पत्रहीन-फल-फूलहीन हो,
सहते सार पतभार-पवन के,
पर कुंकुम सिन्दूर लिपे जब दूल्हा बन वसन्त आता है
तब हर डाली की, हर बगिया को शृंगार नहीं मिलता है ।
सब को प्यार नहीं मिलता है ॥

यद्यपि सभी भक्त मन्दिर में
एक भावना लेकर जाते,
भीर एक विधि से वन्दन कर
पूजा पर सर्वस्व चढ़ाने,
देने को धरदान मगर जब होता है तैयार देवता
तब सब की पूजा को मन्दिर में सात्कार नहीं मिलता है ।
सब को प्यार नहीं मिलता है ॥

घाबर बरस गयो

पाकर निशि का तम, सूनापन,

जब शशि की एक शरीर किरन

सोते फूलों के गालों को हलके हलके सहलाती है ।

तब याद किसी की आती है ॥

उस पार उतारा करती नित,

जो जग के नर-नारी भ्रमणित,

निशि को जब वही नाव सूनी इस पार पड़ी अबुलाती है ।

तब याद किसी की आती है ॥

उन्मुक्त भरोखे से आकर,

सिर, मस्तक मेरा सहला कर

जब प्रात उपा की किरन एक सोते से मुझे जगाती है ।

तब याद किसी की आती है ॥

प्यार नहीं मिलता है...

४६

प्यार सभी करते जग में पर
सब को प्यार नहीं मिलता है।

अथर्व प्रतीक्षा में ऋतुपति की
सभी निवृञ्ज कुञ्ज उपवन के,
पत्रहीन-फल-फूलहीन हो,
सहते शर पतभार-भवन के,
पर कुंकुम सिन्दूर लिये जब दूल्हा बन बसन्त आता है
तब हर डाली को, हर बगिया को शृंगार नहीं मिलता है।
सब को प्यार नहीं मिलता है ॥

यद्यपि सभी भक्त मन्दिर में
एक भावना लेकर जाते,
और एक विधि से वन्दन कर
पूजा पर सर्वस्व चढ़ाते,
देने को धरदान मगर जब होना है तैयार देवता
तब सब की पूजा को मन्दिर में सत्कार नहीं मिलता है।
सब को प्यार नहीं मिलता है ॥

कैसी जीवन की विडम्बना
 है कितनी अपनी ताचारी ?
 लगा दाँव पर तन मन भी हम
 जीत न पाते बाजी हारी,
 सर्वस देकर भी न हमें मिलती मुट्ठी भर धूल किसी से
 अमृत लुटाकर भी विष पीने का अधिकार नहीं मिलता है ।
 सब को प्यार नहीं मिलता है ॥

पूँछ रहा मैं आज स्वयं से
 आखिर क्या इसका कारण है,
 प्यास सभी की एक जगत में
 पर न सुधा का सम वितरण है,
 चलने को तो सब को मिल जाती हैं राहें और मुश्किलें,
 पर हर पत्थी को मजिल का दरस—दुलार नहीं मिलता है ।
 सब को प्यार नहीं मिलता है ॥

सीमित जग का कोप, असीमित—
 है जड—चेतन की अभिलाषा,
 इसीलिये आशा करके भी
 मिलती हमको सदा निराशा,
 कभी कभी तो लहरें खुद हमको तट पर पहुँचा देती हैं,
 कभी डूबने को भी सागर में मँझघार नहीं मिलता है ।
 सबको प्यार नहीं मिलता है ॥

मैं तुम्हें अपना ..



मैं तुम्हें अपना बनाना चाहता हूँ ।

अजनबी यह देश, अनजानी यहाँ की हर डगर है,
बात मेरी क्या—यहाँ हर एक छुद से बसवर है
बिना तरह मुझको बनाले सेज का सिन्दूर कोई
जब कि मुझको ही नहीं पहचानती मेरी नजर है,
आँस में इससे बसाकर मोहिनी मूरत तुम्हारी
मैं सदा को ही स्वयं को भूल जाना चाहता हूँ
मैं तुम्हें अपना बनाना चाहता हूँ ॥

दीप को अपना बनाने का पनगा जल रहा है,
बूंद बनने को समुन्दर की हिमालय गल रहा है,
प्यार पाने को घरा का भेष है व्याकुल गगन में,
भूमने को मृत्यु निशि-दिन स्वाम-भन्यो चल रहा है,
है न कोई भी अनेला राह पर गतिमय हसी से
मैं तुम्हारी भाग में तन मन जलाना चाहता हूँ ।
मैं तुम्हें अपना बनाना चाहता हूँ ।

घावर बरस गयो

देखता हूँ एक मौन अभाव सा ससार भर में,
 सब विमुग्ध, पर रिक्त प्याला एक है हर एक कर में,
 भोर की मुस्कान के पीछे छिपी निशि की सिसकियाँ,
 फूल है हँसकर छिपाये शूल को अपने जिगर में,
 इसलिये ही मैं तुम्हारी आँख के दो बूँद जल में
 यह अधूरी जिन्दगी अपनी डुवाना चाहता हूँ ।
 मैं तुम्हें अपना बनाना चाहता हूँ ॥

वे गये विप दे मुझे मैंने हृदय जिनको दिया था,
 शत्रु हैं वे प्यार खुद से भी अधिक जिनको किया था,
 हँस रहे वे याद में जिनकी हजारों गीत रोये,
 वे अपरिचित हैं जिन्हें हर साँस ने अपना लिया था,
 इसलिये तुमको बनाकर आँसुओं की मुस्कराहट,
 मैं समय की क्रूर गति पर मुस्कराना चाहता हूँ ।
 मैं तुम्हें अपना बनाना चाहता हूँ ॥

दूर जब तुम थे, स्वयं से दूर मैं तब जा रहा था,
 पास तुम आये जमाना पास मेरे आ रहा था
 तुम न थे तो कर सकी थी प्यार मिट्टी भी न मुझको,
 सृष्टि का हर एक कण मुझ में कमी कुछ पा रहा था,
 पर तुम्हें पाकर, न अब कुछ दोष है पाना इसी से
 मैं तुम्हीं से, वस तुम्हीं से लौ लगाना चाहता हूँ ।
 मैं तुम्हें, केवल तुम्हें अपना बनाना चाहता हूँ ॥

श्रव न झाऊंगा...

५१

श्रव न झाऊंगा तुम्हारे द्वार ।

जब तुम्हारी ही हृदय में याद हर दम,
लोचनों में जब मदा बँठे स्वयं तुम,
फिर अरे क्या देव, दानव क्या, मनुज क्या ?
मैं जिसे पूजू जहाँ भी तुम वही साधार ।
किस लिये झाऊँ तुम्हारे द्वार ?

क्या कहा—'सपना वही साधार होगा,
मुक्ति भी भ्रमरत्व पर अधिवार होगा',
किन्तु मैं तो देव । श्रव उग लोच में है
है जहाँ बरती भ्रमरता भ्रम का शृंगार ।
क्या कहेँ साधार तुम्हारे द्वार ?

देखता हूँ एक मौन अभाव सा ससार भर मे,
 सब विमुध, पर खिन्त प्याला एक है हर एक कर में,
 भोर की मुस्कान के पीछे छिपी निशि की सिसकियां,
 फूल है हँसकर छिपाये शूल को अपने जिगर में,
 इसलिये ही मैं तुम्हारी आँख के दो बूंद जल मे
 यह अघूरी जिन्दगी अपनी डुवाना चाहता हूँ ।

मैं तुम्हें अपना बनाना चाहता हूँ ॥

वे गये विष दे मुझे मैंने हृदय जिनको दिया था,
 शत्रु हूँ वे प्यार खुद से भी अधिक जिनको किया था,
 हँस रहे वे याद मे जिनकी हज़ारो गीत रोये,
 वे अपरिचित हैं जिन्हे हर साँस ने अपना लिया था,
 इसलिये तुमको बनाकर आँसुओं की मुस्कराहट,
 मैं समय की क्रूर गति पर मुस्कराना चाहता हूँ ।

मैं तुम्हें अपना बनाना चाहता हूँ ॥

दूर जब तुम थे, स्वयं से दूर मैं तब जा रहा था,
 पास तुम आये जमाना पास मेरे आ रहा था
 तुम न थे तो कर सकी थी प्यार मिट्टी भी न मुझको,
 सृष्टि का हर एक कण मुझ मे कमी कुछ पा रहा था,
 पर तुम्हें पाकर, न अब कुछ शेष है पाना इसी से
 मैं तुम्ही से, बस तुम्ही से लौ लगाना चाहता हूँ ।
 मैं तुम्हें, केवल तुम्हें अपना बनाना चाहता हूँ ॥

अब न आऊंगा...

५१

अब न आऊंगा तुम्हारे द्वार ।

जब तुम्हारी ही हृदय में याद हर दम,
लोचना में जब मदा बैठे स्वयं तुम,
फिर अरे क्या देव, दानव क्या, मनुज क्या ?
मैं जिसे पूजूं जहाँ भी तुम वही साकार ।
किस लिये आऊँ तुम्हारे द्वार ?

क्या कहा—'सपना यहाँ साकार होगा,
मुक्ति भी अमरत्व पर अधिकार होगा',
बिन्दु मैं तो देव । अब उन लोक में हूँ
है जहाँ बरती अमरता मर्त्य का शृंगार ।
क्या कर्म आकर तुम्हारे द्वार ?

वृत्ति-घट दिखला मुझे मत दो प्रलोभन,
 मत डुबाओ हास मे ये अश्रु के कण,
 क्यों कि ढल ढल अश्रु मुझ से कह गये है
 'प्यास मेरी जीत, मेरी वृत्ति ही हार'
 मत कहो—आओ हमारे द्वार।

आज मुझ मे तुम, तुम्हो मे मैं हुआ लय,
 अब न अपने बीच कोई भेद-सशय,
 क्यों कि तिल तिल कर गला दी प्राण । मैंने
 थी खड़ी जो बीच अपने चाह की दीवार ।
 व्यर्थ फिर आना तुम्हारे द्वार ॥

दूर कितने भी रहो तुम पास प्रतिफल,
 क्यों कि मेरी साधना ने पल-निमिष चल
 कर दिये केन्द्रित सदा को ताप—बल से
 विश्व में तुम, और तुम में विश्व भर का प्यार।
 हर जगह ही अब तुम्हारा द्वार

अब तुम हठो...

५२

अब तुम हठो, हठे सब ससार, मुझे परवाह नहीं है ।

दीप, स्वयं बन गया शलभ अब जलते जलते,
मंजिल ही बन गया मुमाफिर चलते चलते,
गाते गाते गेय हो गया गायक ही सुद,
सत्य स्वप्न ही हुआ स्वयं को छनते छनते,
हूँ जहाँ वहाँ भी तरी वही अब तट है,
अब चाहे हर लहर बने मँकधार मुझे परवाह नहीं है ।
अब तुम हठो, हठे सब संगार, मुझे परवाह नहीं है ।

अब पंछी को नहीं बनेरे की है आशा,
भीर बागवाँ को न बहारों की अभिलाषा,
अब हर दूरी पास, दूर है हर समीपता,
एक मुझे लगती अब गुन गुन की परिभाषा,
अब न धोठ पर हँसी, न धाँगों में है धाँसू,
अब तुम फँसो मुझ पर रोज भंगार, मुझे परवाह नहीं है ।
अब तुम हठो, हठे सब संगार, मुझे परवाह नहीं है ।

भव तुम हूँ...
...

५२

भव तुम हूँ, हूँ सब समान, मुझे परदाह नहीं है ।

दीप, स्वयं बन गया ज्योतिष्य और जलने लगे,
मजिल ही बन गया न्यायिक चलते चलते,
गाते गाते गेय हो गए गानक ही श्रुत,
सत्य स्वप्न ही हुआ सब को छतने छतने,
हूँ जहाँ वहाँ भी लग दही भव नट है,
भव चाहे हर लहर बने मँसारा मुझे परदाह नहीं है ।
भव तुम हूँ, हूँ सब समान, मुझे परदाह नहीं है ।

भव पछी को नहीं बने
और बागवाँ को न बहा
भव हर दूरी पाम, दूर ।
एव मुझे लगती भव गुण
भव न छोठ पर हँसी, न
भव तुम पँतो मुझ पर रोब
भव तुम हूँ, हूँ सब

अब मेरी आवाज़ मुझे टेरा करती है,
 अब मेरी दुनियाँ मेरे पीछे फिरती है,
 देखा करती है मेरी तस्वीर मुझे अब,
 मेरी ही चिर प्यास अमृत मुझ पर भरती है,
 अब मैं खुद को पूज, पूज तुमको लेता हूँ,
 बन्द रखो अब तुम मन्दिर के द्वार, मुझे परवाह नहीं है ।
 अब तुम रुठो, रुठे सब ससार, मुझे परवाह नहीं है ।

अब हर एक नजर पहचानी सी लगती है,
 अब हर एक डगर कुछ जानी सी लगती है,
 बात किया करता है अब सूनापन मुझसे,
 टूट रही हर साँस कहानी सी लगती है,
 अब मेरी परछाईँ तक मुझ से न अलग है,
 अब तुम चाहे करो घृणा या प्यार, मुझे परवाह नहीं है ।
 अब तुम रुठो, रुठे सब ससार, मुझे परवाह नहीं है ।

